Digitized by ... Foundation Chennai and ...

...ain. Gurukul Kangri Collection, Har...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

पक्षी : विकास और स्वभाव का अध्ययन —राजेन्द्रकुमार	३
विविध उर्वरक —सत्यकुमार	६
वस्त्रोद्योग में रसायन एवं भौतिकी —राजकुमार शर्मा	१५
लेसर —एस. प्रेमी	२१
अंजीर और अडूसा —आर. एन. सिंह	२६
ऊर्जा के विविध स्वरूप —श्यामकुमार तिवारी	३६
डा. टामसन का अनुसन्धान —जी. नदकर्णी	४३
गतिशील डंड-समूह —डा. हर्ष प्रियदर्शी	५०

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां	४६
विज्ञान क्लब	५३
इनाम लो	५६
तुम्हारी कलम से	५७

वर्ष ७

एक प्रति : ७५ पैसे

निर्देशित क्षेप्यास्त्र की सहायता से ने हाल ही में परमाणु बम का विस्फोट है। क्षेप्यास्त्र ने सामान्य रूप से उड़ान और परमाणु बम को लिये हुए एक दूरी पर लक्ष्य से टकरा गया।

चीन ने यह दावा किया है कि उसकी रक्षा-सामर्थ्य का तेजी से विकास हो रहा

उ. वियतनाम पर अमरीकी का के विरोध में बर्ट्रेण्ड रसल पीस फाउ लन्दन के निदेशक, वैज्ञानिक यथार्थ अनुयायी प्रसिद्ध दार्शनिक लार्ड रसल अन्तर्राष्ट्रीय ट्रिब्यूनल की स्थापना की वियतनाम के मसले पर अमरीकी राज को युद्ध का अपराधी करार देगा। लार्ड ने घोषित किया है कि यह कदम उन्होंने वता की रक्षा के लिए उठाया है।

यह निश्चय ही खेदजनक है कि रसल ने अमरीका को द. पू. एशिया के विस्तार के लिए दोषी ठहराया है चीन की तथाकथित वैज्ञानिक का जिसके अन्तर्गत वह परमाणु शस्त्रों का कर रहा है, विरोध नहीं किया है।

विकास में लगे हुए देशों में युद्ध वैज्ञानिक क्रान्ति उन नेताओं की का परिणाम है जो जनता को अस्तित्व भुला देने के लिए वाध्य कर क्या यह सुना गया कि चीन में परमाणु का शान्ति-कार्यों में उपयोग हो रहा है

भारत भी परमाणु बम बना सकता लेकिन वह परमाणु-शक्ति का उपयोग के कार्यों में करने के लिए कटिबद्ध है। तीय वैज्ञानिकों की आस्था नारों और बहाव में नहीं है।

अंक ७

सम्पादक : शंकर मेहरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

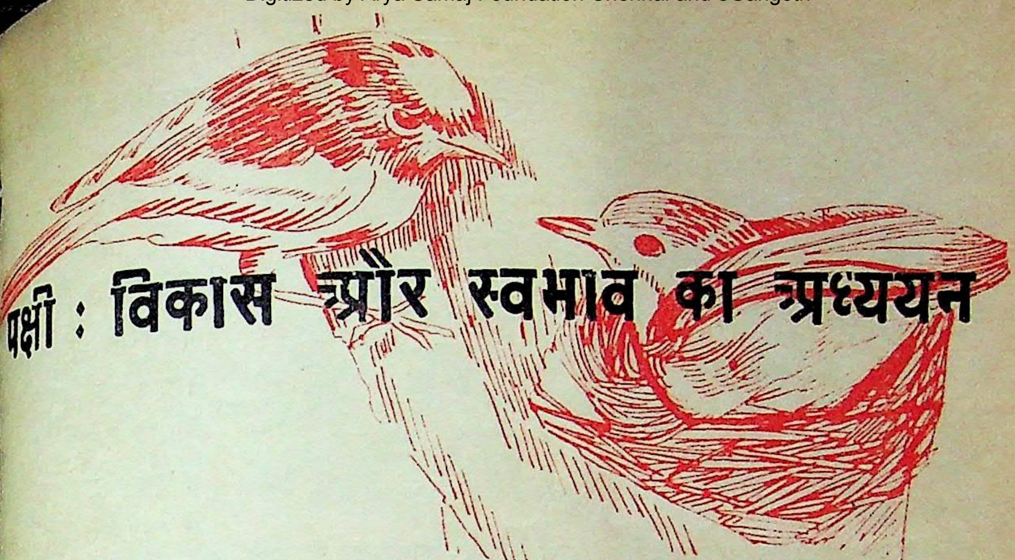

पक्षी : विकास और स्वभाव का अध्ययन

राजेन्द्रकुमार

जल में सर्व प्रथम अस्थियुक्त जीवधारियों के रूप में मछलियों का उद्भव हुआ। अधिकांश मछलियां जल के बाहर पृथ्वी पर रह सकने में असमर्थ थीं। केवल वे ही मछलियां भूमि पर कुछ मिनटों तक रह पाती थीं जिनके फेफड़े थे, फिर भी स्वच्छन्दता-पूर्वक उनका इधर-उधर चल-फिर सकना सम्भव नहीं था। किन्तु उभयचारी जन्तु (amphibians) जो अण्डे देते थे, शैशव में जल में तैरते थे और प्रौढ़ावस्था में धरती पर चलते भी थे। अनुमान है कि कालान्तर में इनके पैर विकसित हुए होंगे, और ये उन्मुक्त रूप से पृथ्वी पर विचरण करने में समर्थ हुए होंगे। मेंढक इस श्रेणी के जन्तुओं का एक उपयुक्त उदाहरण है। नृ-विज्ञानवेत्ताओं के अध्ययन के अनुसार आरम्भिक उभयचारी सुअर से बड़े आकार के नहीं थे।

सरीसृप से पक्षी का विकास हुआ

वैज्ञानिको का मत है कि उभयचारी जन्तुओं के बाद सरीसृप (reptiles) आस्तित्व में आये। इस वर्ग के जन्तु ठण्डे खून वाले होते हैं और अण्डे देते हैं। पृथ्वी के इतिहास में इनका स्वर्ण युग प्रसिद्ध है। उस समय धरती पर विचरण करने वाले जन्तुओं में ये अत्यन्त विशालकाय थे। उभयचारी जन्तुओं के विपरीत अधिकांश सरीसृप पूरी तरह धरती पर ही रहते थे। ये अपने अण्डे भी जमीन पर ही देते थे जो सूर्य की गरमी से सेये जाते थे। किन्तु कालान्तर में इनकी कुछ जातियां वापस जल में चली गयीं, और कुछ जातियां उड़ने में समर्थ हो गयीं।

इन विशालकाय जन्तुओं का युग अनोखा था। कल्पनातीत रूप से ये विशालकाय थें। इस युग में प्रकृति जन्तुओं के आकार के साथ शायद प्रयोग कर रही थी। वह जीवन के विकास का दूसरा युग था। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि उस युग में उत्तरी अमरीका के आकाश में विशालकाय जन्तु उड़ते रहे होंगे। उन जन्तुओं के पंखों का फैलाव लगभग २५ फुट तक रहा होगा। लेकिन पंखों की तुलना में शरीर निस्सन्देह छोटा रहा होगा।

प्राप्त अवशेषों के आधार पर पक्षियों के पूर्वज की कल्पना कर सकते है। उसकी खोपड़ी बहुत पतली रही होगी। चोंच में दांत नहीं रहे होंगे। पिछला हिस्सा लम्बा और पतला होने की सम्भावना है जो निश्चय ही उड़ने में सहायक रहा होगा। वैज्ञानिकों ने इसे टेरैण्डन इंजेन्स (Pterandon Ingens) कहा है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

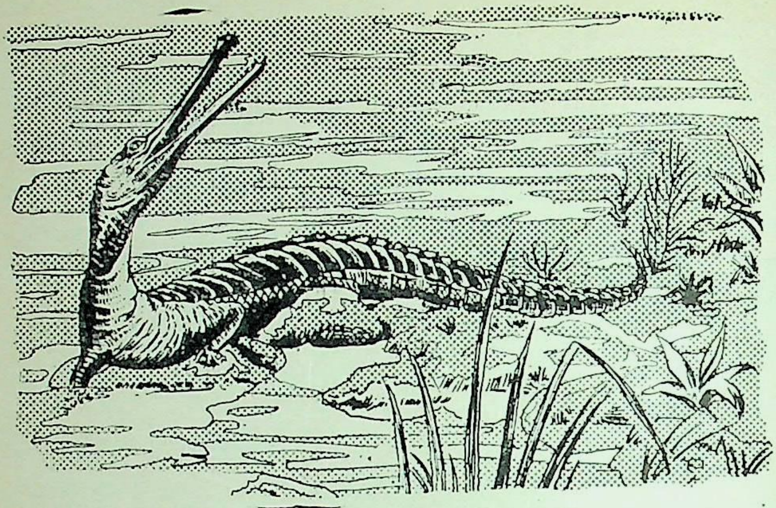

वैज्ञानिकों का मत है कि सरीसृप वर्ग की कुछ जातियां कालान्तर में उड़ने में समर्थ हुईं—(चित्र) छिपकली का पूर्वज टोलियोसारस

जिसका अर्थ होता है दन्तरहित उड़ाका।

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि पृथ्वी के इतिहास में उड़ने वाले जन्तुओं में टेरैग्डन इंजेन्स अत्यन्त विशालकाय थे। इनके सम्बन्ध में सबसे अधिक रोचक तथ्य यह है कि ये अपनी पांखें फड़फड़ाकर नहीं उड़ते थे। इस तरह इन्हें बहुत कम शक्ति व्यय करनी पड़ती थी। यही कारण है कि इनका काम थोड़े से भोजन से ही चल जाता था। ये आसमान में ग्लाइडर की तरह छाये रहते थे। घण्टों ओर दिनों तक ये उड़ते रहते थे। भोजन के रूप में ये मछलियां खाते थे। इनके नीचे के जबड़े में थैली के आकार का एक अंग होता था जिसमें ये मछलियां रख लेते थे, जिन्हें ये अपनी उड़ान के दौरान खाते रहते थे। ये अपनी उड़ान में चौड़ी झीलें भी पार कर जाने में समर्थ थे।

उड़ने वाला अत्यन्त प्राचीन सरीसृप

उस युग में विभिन्न आकार के उड़ने वाले जन्तुओं का विकास हो रहा था। कुछ वैज्ञानिकों की धारणा है कि उड़ने वाला अत्यन्त प्राचीन सरीसृप आकार में एक मुरगी के बराबर रहा होगा। कालान्तर में बड़े आकार के उड़ने वाले जीवों का विकास हुआ होगा। फिर ऐसे जीव भी अस्तित्व में आये जिनकी पांखें एक छोटे वायुयान की भांति रही होंगी।

पृष्ठवंशी जीवों में पक्षी विशेष कोटि के जीव हैं—देखने में अत्यन्त खूबसूरत, अत्यन्त प्रशंसनीय। ये सम्पूर्ण विश्व में पाये जाते हैं। एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव तक, दुनिया में हर कहीं इनका चहचहाना सुनायी पड़ता है। हिमालय की ऊंचाइयों पर, सुनसान टापुओं पर, घने, अंधेरे जंगलों में और उजाड़ बस्तियों में भी पक्षी मिलेंगे। दक्षिणी ध्रुव का केन्द्र (Antarctic center) ही एक ऐसा स्थान है जहां पक्षी नहीं देखे गये हैं। कुछ पक्षी गोताखोर होते हैं जो मछलियों की तलाश में सौ फुट की गहराई तक भी डुबकी लगा लेते हैं, जबकि ऐसे भी पक्षी हैं जो अपने शिकार की टोह में अंधेरी खोहों में भटकते रहते हैं।

संसार भर में कुल कितनी जाति के पक्षी हैं, यह कहना कठिन है, किन्तु विशेषज्ञों ने व्यापक निरीक्षणों के आधार पर जो सूची दी है उसमें विश्व के हर क्षेत्र के पक्षी सम्मिलित हैं। कुछ ही अपरिचित जातियां छूटी होंगी। पक्षियों को पहचानना कठिन है। उनकी बनावट से तो उनकी पहचान करते ही हैं, लेकिन बनावट से अधिक महत्त्वपूर्ण उनकी पोशाक है। विभिन्न जाति के पक्षियों के परों की बनावट तथा उनके रंग विभिन्न प्रकार के होते हैं। पक्षी अपने पंखों के आकर्षक रंगों के कारण ही सुन्दर लगते हैं। इसके अतिरिक्त पर जाड़े और गरमी से इनकी रक्षा भी करते हैं।

शैशव में पक्षियों के पर भद्दे होते हैं

शैशव में पक्षियों के पर अनावश्यक रूप

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से भद्दे होते हैं, इसी कारण ये अनाकर्षक दीखते हैं। उम्र बढ़ने के साथ-साथ इनका रंग भी निखरता जाता है। कुछ पक्षियों के बच्चे अण्डों में से निकलने के वर्षों बाद अपनी जाति का मौलिक रंग पाते हैं।

पक्षियों के पर दो प्रकार के होते हैं—डैने तथा शरीर पर छाये हुए रोयें।

डैने पक्षियों की उड़ने में सहायता करते हैं। रोयेंदार पर जो इन पर वस्त्र की भांति छाये रहते है, सरदी-गरमी से इनकी रक्षा करते हैं। इनके रोयें अक्सर झड़ते रहते हैं और नये आते रहते हैं। यह क्रिया वर्ष में प्रायः दो बार होती है और उम्र भर चलती रहती है।

विकासवाद का यह एक प्रमुख सिद्धान्त है कि जीवधारी अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढालकर अपने चारों ओर के वातारण से अपनी रक्षा के लिए अपना रंगरूप वैसा ही बना लेते हैं। भूमि पर रहने वाले अधिकांश पक्षी मटमैले हैं। रेत में रहने वाली कुररी का रंग रेतीला होता है।

पक्षियों के लिए आवश्यक अंगों में दुम और डैने का अनन्य महत्त्व है। दुम से उसे उड़ने में काफी सहायता मिलती है। इससे ही वह दिशा बदलता है। अपनी रफ्तार को कम भी कर सकता है। मुख्यत: डैने पक्षियों की उड़ने में सहायता करते हैं।

भांति-भांति के पक्षियों की चोंच की बनावट अलग-अलग होती है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे खाते क्या हैं, और कैसे खाते हैं? उनके पैर की बनावट भी बहुत कुछ उनके रहने के स्थानों पर निर्भर करती है। पानी में तैरने वाले पक्षियों के पैर की अंगुलियां एक झिल्ली से जुड़ी होती हैं। जो पक्षी पेड़ पर रहते हैं उनका पिछला अंगूठा मजबूत होता है। इस तरह वे डाल से लटके रहकर गिरते नहीं। शिकारी पक्षी फौलादी पंजे वाले होते हैं।

पक्षी प्रजनन-काल आने पर ही अण्डे देते हैं। हरेक पक्षी के अण्डों की एक निश्चित संख्या होती है। जब तक यह संख्या पूरी नहीं हो जाती, मादा अण्डे देती रहती है।

पक्षियों में अन्तर्प्रेरणा

जब अण्डों का सेना शुरू हो जाता है, तो मादा इस काम में तल्लीन हो जाती है। प्रायः यह देखा गया है कि अण्डों के खराब हो जाने पर भी कुछ जाति की मादाएं उन्हें सेती रहती हैं।

जब अण्डे के भीतर से पक्षी बाहर निकलने लगता है तो उसके मां-बाप काफी सतर्क हो जाते हैं।

प्रकृति ने पक्षियों को अन्तर्प्रेरणा शक्ति दे रखी है। इस शक्ति से ये अपनी जीवन-रक्षा करते हैं। उदाहरणस्वरूप यह उल्लेखनीय है कि जब अण्डे से बच्चा बाहर निकलने लगता है, तो खोल तोड़ने के लिए वह भीतर से उस पर चोट करता है। इस चोट की खट्-खट् ध्वनि आसपास सुनायी पड़ती है। निस्सन्देह उस समय बच्चे के मां-बाप सावधानीपूर्वक दुश्मन की आहट लेते रहते हैं और खतरे की आशंका होते ही एक विचित्र प्रकार की ध्वनि

स्टिल्ट स्वभाव से घुमक्कड़ पक्षी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

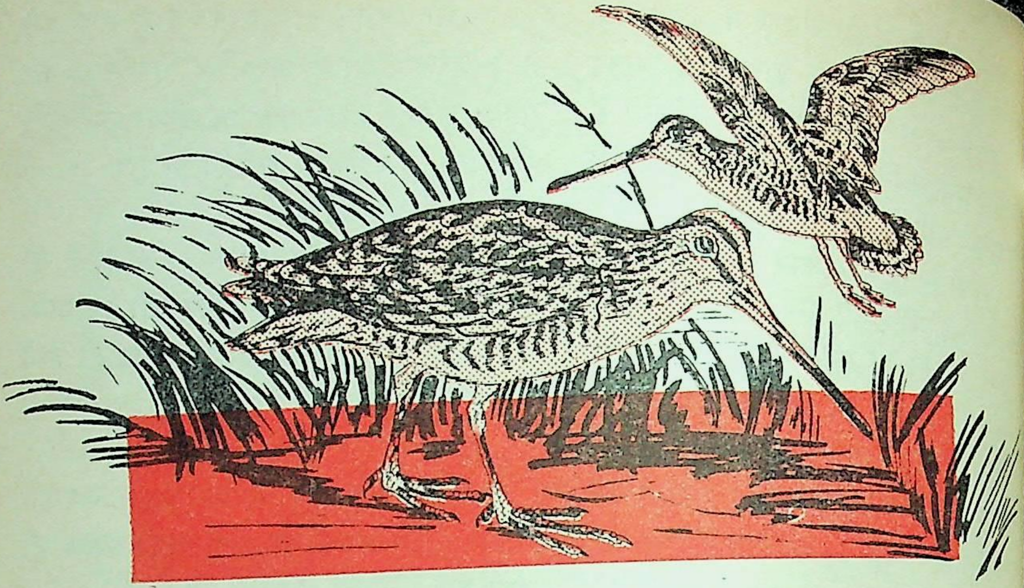

शिकार का पक्षी चहा । चहे कबूतर-जैसे होते हैं

करते हैं । यह ध्वनि सुनते ही बच्चा अन्दर से खट्-खट् करना बन्द कर देता है और चारों ओर निस्तब्धता फैल जाती है । जब खतरा दूर होता है, तो मादा एक भिन्न प्रकार की आवाज करती है और बच्चा पुनः खोल पर चोट करना प्रारम्भ करता है । इस उदाहरण से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे बच्चा पहले से ही शिक्षित हो ।

नवजात शिशु अपने सहज ज्ञान की सहायता से अपने शुरू के कुछ दिन गुजारता है । फिर उसके माता-पिता उसके सामने उड़ने का प्रदर्शन करके उसे उड़ना सिखाते हैं । चोंच में भोजन ले आकर उसे खिलाते भी हैं । कभी-कभी कोई खाने की चीज लेकर उसके सामने कम ऊंचाई पर उड़ते हैं और उसे उड़ने का लालच देते हैं । प्रयत्न करके वह भी थोड़ा-थोड़ा उड़ने लगता है ।

सन्तान की रक्षा में प्रायः यह देखा गया है कि पक्षी अपनी जान की भी परवा नहीं करते । जंगली बतख के बारे में यह प्रसिद्ध है कि जब वह देखती है, उसके अण्डे मुसीबत में घिर गये हैं, तो घोंसला समेत अण्डों को लेकर किसी सुरक्षित स्थान की टोह में निकल पड़ती है । यह भी प्रायः देखा गया है कि अण्डों को सुरक्षित स्थान तक पहुंचाने के प्रयत्न में खुद उसकी ही मृत्यु हो जाती है।

पक्षी सन्तान-रक्षा करने में तरह-तरह की बहानेबाजियां करके आगन्तुक को चक्कर में डाल देते हैं । कुछ पक्षी बहुधा दुश्मन को देखकर लंगड़ाने लगते हैं । दुश्मन समझता है कि किसी शिकारी ने उन्हें घायल कर दिया है इसलिए वह उनके पीछे-पीछे उन्हें पकड़ने के लिए दौड़ने लगता है । वे चकमा देते हुए उसे अपनी सन्तान से दूर ले जाते हैं । जब वे यह महसूस करते हैं कि दुश्मन को वे काफी दूर घसीट लाये हैं, तो फिर फुर्र से उड़ जाते हैं। दुश्मन भ्रमित रह जाता है ।

छोटे-छोटे पक्षी सन्तान-पालन में भेद-भाव नहीं रखते और अपने बच्चों को खिलाते समय दूसरे के बच्चों को भी खिलाते हैं।

पक्षी खेल खेलते हैं

पक्षी खेल भी खेलते हैं । कभी ये अपना घोंसला बनाते हैं, कभी उसे तोड़-फोड़कर नष्ट कर देते हैं । कभी मादा को हटाकर नर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डों पर बैठता है और उसे फोड़ डालता है। डाल पर लटककर झूला झूलने में भी पक्षियों को बड़ा आनन्द आता है। कई पक्षी पिंजड़े का सामान बाहर फेंकने में आनन्द अनुभव करते हैं।

पक्षियों में जब जोड़ा बांधने का समय आता है, तो नर नानाप्रकार से मादा को रिझाने की कोशिश करता है। गाने वाले पक्षी जोर-जोर से गाना शुरू कर देते हैं। इन दिनों उनके गले में एक खास मिठास आ जाती है। कभी-कभी गाने के साथ-साथ नर तरह-तरह के हावभाव दिखाता है। पंख फैलाता है, दुम हिलाता है और छाती फुलाता है। मोर, कबूतर आदि मादा को रिझाने के लिए नाच दिखाते हैं।

पक्षियों की अनेक जातियों का बहुधा शिकार भी किया जाता है। चहा इनमें उल्लेखनीय है। इसकी लगभग आठ जातियां भारत में पायी जाती हैं। चहे कद में कबूतर-जैसे होते हैं। इनकी आंखें बड़ी तथा सिर में काफी पीछे की ओर होती हैं।

चहों में नर-मादा एक रंग-रूप के होते हैं। स्वभातः ये कीटभक्षी हैं। कीड़े-मकोड़ों के अतिरिक्त ये घोंघे भी खा जाते हैं। अपनी लम्बी चोंच को कीचड़ में डालकर ये कीड़े-मकोड़े चुगते हैं।

पहाड़ी मुरगी भी शिकार के पक्षियों की कोटि में आती है। यह रंगबिरंगी तथा भड़कीली पोशाक वाली होती है।

पक्षियों में अनेक घुमक्कड़ स्वभाव के होते हैं। विश्व के घुमक्कड़ पक्षियों में स्टिल्ट का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पूरे उत्तरी अमरीका और उत्तरी ध्रुव तक यह घूमता है।

राबिन वर्ष भर गाता है

आस्ट्रेलियाई स्टिल्ट जलाशयों के पास घासफूस से अपना घोंसला बनाता है। अपने अण्डों की रक्षा में यह कई चालें चलता है। आक्रमणकारी से अपना घोंसला बचाने के लिए इसकी भिन्न-भिन्न जातियां भिन्न-भिन्न उपाय काम में लाती हैं। आस्ट्रेलिया के चितकबरे स्टिल्ट का नर आदमी को देखकर लंगड़ा हो जाता है। मृत होने का अभिनय भी कुशलता से कर लेता है।

कुछ पक्षी वर्ष भर गाते रहते हैं। राबिन भी ऐसा ही पक्षी है। जाड़े की भोर में राबिन की आवाज प्रायः सुनी जाती है। यह आवाज लुभावनी होती है। इसकी चमकीली आंखें और रंग आकर्षक होता है।

बतख भी अनोखा पक्षी है। यह पक्षी प्रायः आबादी के निकट पाया जाता है। इसे नियमित रूप से खाना देकर पालतू भी बनाया जा सकता है। पालतू बतखों को मीठे पानी की झील में रखा जाता है।

बतखें सर्वभक्षी होती हैं। किन्तु एक

पहाड़ी मुरगी भी शिकार के पक्षियों की कोटि में आती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

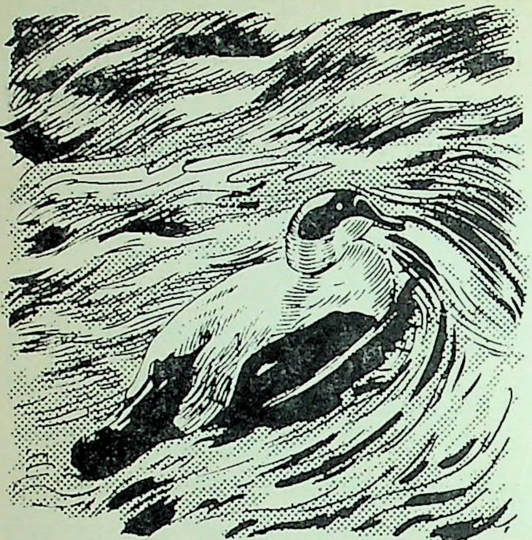

बतख समुद्र के किनारे पानी में दो सौ फुट की गहराई तक गोता लगा सकती है

विशेष जाति की बतखें सिर्फ मछली खाती हैं। इस बतख की विशेषता यह है कि समुद्र के किनारे यह पानी में दो सौ फुट की गहराई तक भी गोता लगा लेती है।

यह एक रोचक तथ्य है कि पक्षी सूर्य-स्नान करते हैं। नीलकण्ठ बहुधा शरीर के परों को फैलाकर तथा डैने और पूंछ को ऊपर उठाकर धूप सेवन करता है। अन्य पक्षी भी अपने घोंसलों के बाहर धूप में बैठते हैं।

नहाने के बाद पक्षी काफी देर तक अपने रोयों की सफाई करते हैं। कभी-कभी चोंच से एक-दूसरे के बाल भी संवार दिया करते हैं। बतखों की पीठ पर पूंछ के पास एक उठा हुआ स्थान होता है। इससे एक प्रकार का स्निग्ध तरल पदार्थ निकलता है। इस तरल पदार्थ से ये अपने परों का श्रृंगार करती हैं।

अनेक जल-पक्षी घण्टों तरह-तरह से जल में खेल खेलते हैं। कभी-कभी इस तरह ये सारा दिन बिता डालते हैं।

पक्षियों में कुछ चोर-डाकू भी होते हैं। कौआ प्रसिद्ध चोर है। गरुड़ पक्षियों का डाकू है। समुद्री गरुड़ तो जल-दस्यु के रूप में विख्यात है।

पक्षियों का संसार अनोखा है। पक्षी हमारे इतने नजदीक हैं, फिर भी हम उनसे दोस्ती नहीं करते। किसी ने सच ही कहा है कि जिस इनसान के कानों ने चिड़ियों के मोहक संगीत में रस लेना नही सीखा, वह अकेला सफर करता है, जबकि उसे अच्छे साथी मिल सकते हैं। ●

हवासिल : अनोखे पक्षियों का उपनिवेश

हवासिल अक्सर झुण्ड बनकर रहते हैं। पक्षी-निरीक्षकों ने इनके गांव के गांव बसे हुए देखे हैं। बर्मा में सितांग नदी के आस-पास के जंगलों में इनका एक उपनिवेश फैला है बसमें करोड़ों की संख्या में ये रहते हैं।

हवासिल कद में गिद्ध से भी बड़े हते हैं। गरदन छोटी होती है। इनके पांव मजबूत तथा जालीदार होते हैं। चोंच मोटी तथा लम्बी होती है।

ये अपनी उड़ान के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जब ये उड़ते हैं, तो इनके परों से सीटी की आवाज होती है।

ये पक्षी मत्स्यभक्षी हैं। इनका मछली पकड़ने का तरीका बड़ा रोचक है। ये समुद्र में दर्जनों की संख्या में मछली पकड़ने निकलते हैं, और अपने डैनों से पानी को चोट देते हुए आगे बढ़ते हैं। इस तरह ये मछलियों को गहरे पानी से छिछले पानी की ओर जाने के लिए बाध्य करते हैं।

ये कतार बांधकर उड़ते हैं।

यह ज्ञातव्य है कि हवासिल इस देश का बारहमासी पक्षी नहीं है। शीतकाल में यह समुद्रतटवर्ती प्रदेशों में देखा जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध उर्वरक

सत्यकुमार, एम. एस-सी.

नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटैशियम देने वाले उर्वरकों के अतिरिक्त भी अनेक उर्वरक हैं जो भूमि को पौधों के लिए आवश्यक तत्व प्रदान करते हैं। इनमें मुख्य पदार्थ हैं— नमक, गन्धक, चूना या चूने का पत्थर, कैल्शियम सल्फेट (जिप्सम), फेरस सल्फेट (हरा कसीस), गैस लाइम तथा विरल तत्व (लोहा, जस्ता, मोलिब्डिनम, मैंगनीज, बोरान आदि)।

नमक : अप्रत्यक्ष उर्वरक

नमक अप्रत्यक्ष रूप से उर्वरक का कार्य करता है। सोडियम आयनों के विनिमय से जटिल लवणों से पोटैशियम आयन मुक्त होकर पौधों को प्राप्त हो जाते हैं। नमक भूमि की जल धारण करने की क्षमता बढ़ाता हैं तथा अविलेय फासफेटों और सिलीकेटों को विलेय अवस्था में लाता है। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से पौधे को फासफोरस देता है। नमक अनेक कीटाणुओं को नष्ट करता है। यदि भूमि में चूना पर्याप्त हो, तो नमक मिलाने से कपास की उपज बहुत अच्छी होती है। उपज के अतिरिक्त कपास की किस्म भी सुधरती है। नमक हलकी भूमि के लिए उत्तम है तथा मूली, प्याज, टमाटर, चुकन्दर, गोभी, आम के लिए विशेष लाभदायक है। फलीदार फसलों के लिए नमक हानिकारक होता है। यह साधारणतः धान्यों के भूसे को कठोर करता है।

पौधे के लिए आवश्यक विरल तत्त्व गन्धक

गन्धक की गिनती पौधे के लिए आवश्यक विरल तत्त्वों में होती है। भूमि में गन्धक वर्षा-जल द्वारा सल्फेटों के रूप में पहुंचती है। इस प्रकार भूमि को प्रति एकड़ लगभग १२ किलो ग्रा. गन्धक मिलती है। किन्तु भूमि में से प्रति एकड़ २५ किलो ग्रा. गन्धक पौधों में पहुंचती है। अतः बाहर से गन्धक मिलाया जाना आवश्यक है। वैसे कार्बनिक खादों, पोटैशियम सल्फेट तथा सुपर फासफेट आदि उर्वरकों के साथ कुछ गन्धक भी भूमि में पहुंचती है।

भूमि में गन्धक मिलाने से जड़ों का विकास होता है। रिजका में ग्रन्थियां अधिक विकसित होती हैं। गन्धक की उपस्थिति से पौधों में रोगों से लड़ने की शक्ति रहती है। भूमि में इसकी कमी से फसलों को अनेक रोग हो जाते हैं। तम्बाकू की उपज के लिए गन्धक बहुत लाभदायक है। प्याज, लहसन तथा सरसों की फसल के लिए भी गन्धक आवश्यक है। पौधे में सगंध तैल बनाने के लिए भी गन्धक का होना आवश्यक है।

चूना तुरन्त फसलें अच्छी कर देता है

चूना अर्थात कैल्शियम आक्साइड या पानी मिलाने पर कैल्सियम हाइड्रोक्साइड और चूने का पत्थर अर्थात् कैल्शियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्बोनेट, संगमरमर, चाक, कंकड़, डोलोमाइट इत्यादि पदार्थ जिनमें कैल्शियम कार्बोनेट होता है, सभी चूने के पत्थर की श्रेणी में आते हैं। पर भूमि में चूना मिलाने पर भी वह जल और कार्बन डाइआक्साइड से कैल्शियम कार्बोनेट में ही बदल जाता है। अतः भूमि के दृष्टिकोण से चूना या चूने का पत्थर एक ही वस्तु है।

$CaO \quad (+H_2O) + CO_2 \rightarrow Ca\,CO_3 \; (+H_2O)$.

भूमि में चूना के बारे में कहा जाता है कि तुरन्त की फसलें तो अच्छी हो जाती हैं पर आगे चलकर भूमि की उर्वरता समाप्त हो जाती है।

चूना भूमि की अम्लीयता दूर करता है। अम्लीय अवस्था में जीवाणु पनप नहीं पाते। जीवाणु कार्बनिक पदार्थ का विच्छेदन-कर धरण आदि बनाने में सहायक होते हैं। चूने में कैल्शियम होने के कारण विनिमेय आयन अधिक हो जाते हैं, विनिमय द्वारा पौधे को पौटैशियम आयन सहज प्राप्त हो जाते हैं। चूने के साथ अशुद्धि के रूप में मैग्नीशियम और फासफोरस भी पौधों में पहुंच जाता है। चूने की उपस्थिति में नाइट्रीकरण अच्छा होता है। भूमि की ऊपर की तहों से जल का नीचे रिसना बढ़ जाता है। मिट्टी भुरभुरी हो जाती है और इस तरह नाइट्रीकरण अच्छा होता है। चूने वाली भूमि स्वस्थ मानी जाती है। इसके अभाव में पौधों को मुदगर मूल आदि अनेक रोग हो जाते हैं। फलीदार फसलों में सेंजी और रिजका तथा सब्जियों में चुकन्दर, गोभी, बन्दगोभी के लिए चूना बहुत लाभदायक है।

भूमि पर चूने का भौतिक और जैविक दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है।

भूमि में चूने का आधिक्य होने से हानियां भी अनेक हैं। पौधों को विरल तत्त्व प्राप्त करने में कठिनाई होती है; भूमि में कार्बनिक पदार्थ का विच्छेदन अधिक तथा शीघ्र होने लगता है, बाष्पशील पदार्थों को पौधा तुरन्त नहीं ले पाता; फासफोरस के जटिल यौगिक बन जाते हैं जिनसे पौधे को फासफोरस प्राप्त नहीं हो पाता; रेतीली भूमि की संरचना बिगड़ जाती हैं; छोटे पौधों के बीज चूने के दाहक सम्पर्क में जल जाते हैं; घास झुलस जाती है; फसल समय के पूर्व पक जाती है; आलू तथा तरबूज पर अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है।

कैल्शियम सल्फेट पौधों को कई तत्त्वों की प्राप्ति कराता है

कैल्शियम सल्फेट ($CaSO_4, 2H_2O$) जिप्सम (दूध पथरी) नाम से प्रकृति में पर्याप्त मिलता है। इसका कैल्शियम मिट्टी के जटिल कणों से पोटैशियम, फासफोरस, मैगनीशियम आदि का विनिमयकर पौधों को इन तत्त्वों की प्राप्ति कराता है।

यह भूमि के लिए हानिकारक सोडियम कार्बोनेट को सोडियम सल्फेट में बदल देता है—($CaSO_4 + Na_2CO_3 \rightarrow Na_2SO_4 + CaCO_3$)।

ऊसर भूमि में कार्बोनेट अधिक होता है, अतः उसके लिए जिप्सम अति उत्तम है। जिप्सम की उपस्थिति में 'एमोनीकरण' भी बढ़ जाता है। समुद्र के किनारे की मिट्टी के लिए जिप्सम विशेषतः उपयुक्त रहता है। यह दाल की फसलों, विशेषतः अरहर की दाल के लिए उपयुक्त है। दालों के अतिरिक्त यह चना, तम्बाकू और आलू के लिए लाभदायक है।

फेरस सल्फेट ($FeSO_4 . 7H_2O$) भूमि में पौधों की आवश्यकता के लिए पर्याप्त होता है। वैसे भी पौधे को अधिक लौह की आवश्यकता नहीं होती। पौधे की राख के विश्लेषण से पता चलता है कि इसमें केवल १-२% लौह आक्साइड रूप में होता है। अनेक वैज्ञानिकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मत है कि भूमि में हरा कसीस देने से आलू, गोभी, धान्य तथा सेम वर्ग की फसलें अच्छी होती हैं।

गैस लाइम : कोल गैस का उप-उत्पादन

गैस लाइम कोल गैस के उत्पादन में गौण रूप में प्राप्त होता है। यह हरे-पीले रंग का दुर्गन्धयुक्त पदार्थ है। कोल गैस की अशुद्धियों में मुख्यत: हाइड्रोजन सल्फाइड, कार्बन डाइआक्साइड और कार्बन डाइसल्फाइड होते हैं। क्योंकि ये गैसीय अशुद्धियां हैं और चूने में शोषित हो अनेक यौगिक बनाती हैं, अतः प्रयुक्त चूने को गैस लाइम कहते हैं। यह कैल्शियम सल्फाइड, कैल्शियम कार्बोनेट, कैल्शियम बाई कार्बोनेट, कैल्शियम सल्फाइड, सल्फो कैल्शियम सायनाइड, बुझा हुआ चूना, अमोनिया, कुछ सायनाइड और फैरोसायनाइड आदि का जटिल मिश्रण होता है।

जब गैस लाइम कोल गैस शोधन के उपयुक्त नहीं रहता, अर्थात् काम आ चुकता है, तब इसे खाद के लिए काम में लेते हैं। यह विषैला पदार्थ है इसलिए एकदम खेत में नहीं डाल दिया जाना चाहिये। पहले इसे खुले में रखकर आक्सीकृत होने देना चाहिये। इससे अनेक गैसीय हानिकारक पदार्थ निकल जाते हैं। कैल्शियम लवणों के कारण यह भूमि और फसल दोनों के लिए लाभदायक है पर इसका उपयोग विशेषज्ञों की देख-रेख में ही करना चाहिये।

पौधों को विरल तत्त्वों की अधिक आवश्यकता नहीं होती। इनमें मुख्यत: मोलोब्डिनम, जस्ता, बोरान, लोहा और मैंगनीज हैं। ये किन्हीं-किन्हीं पौधों में बहुत थोड़ी मात्रा में मिलते हैं। वैसे प्रकृति ने पौधों के लिए ही सूक्ष्म मात्रा रखी है, क्योंकि इनकी अधिक मात्रा हानिकारक है। आवश्यकतानुसार इनके लवणों की थोड़ी मात्रा भूमि में

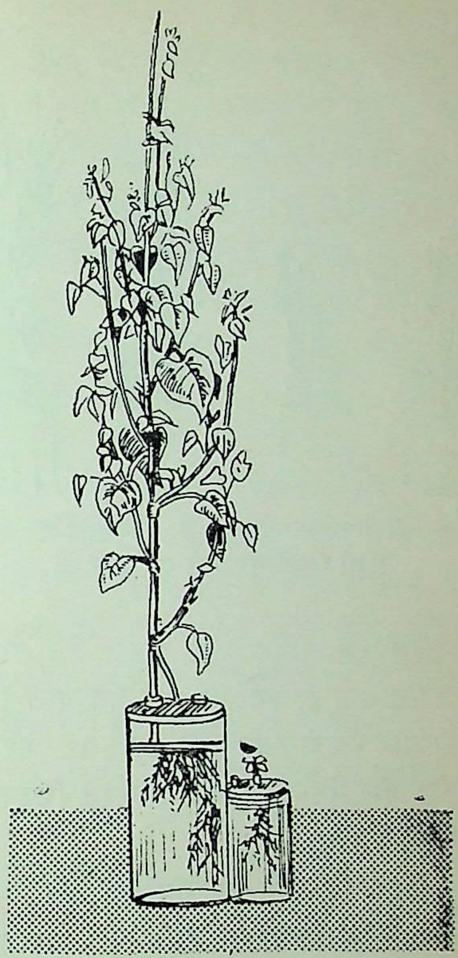

भूमि में मिलकर विरल तत्त्व पौधों के विकास में उत्प्रेरक का कार्य करते हैं

अन्य मुख्य उर्वरकों के साथ मिलाकर दी जाती है।

भूमि में मिलकर विरल तत्त्व पौधों के विकास में उत्प्रेरक या उत्तेजक का कार्य करते हैं। ये पौधों में बीमारी नहीं लगने देते। संकट-काल में पौधे अन्य तत्त्वों के स्थान पर इनसे अपना काम चला सकते हैं। कई जटिल लवणों से पौधों के लिए आवश्यक तत्त्व प्राप्त करते हैं; जीवाणु क्रिया में वृद्धि करते हैं; आक्सीकरण, अवकरण, रसाकर्षण आदि अनेक रासायनिक प्रक्रियाओं पर इनका प्रभाव पड़ता है। ज्ञातव्य है कि रसाकर्षण के कारण ही पत्तियों में सरसता रहती है तथा जड़ें सुदृढ़ होती हैं।

लोहे व मैंगनीज की कमी से पौधों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

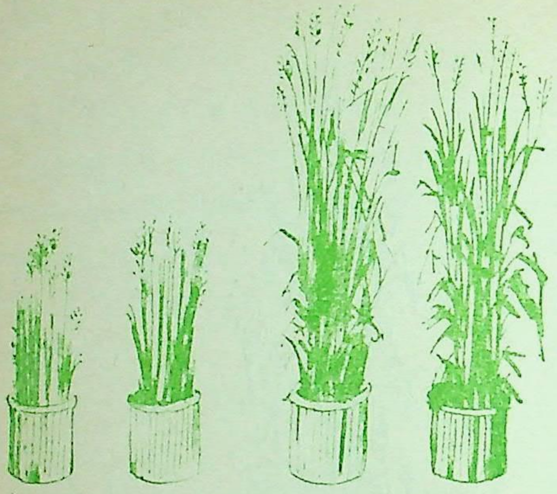

लोहे और मैंगनीज की कमी से पौधे छोटे रह जाते हैं, और पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं

हरिद्रोग (Chlorosis) हो जाता है। पोधे छोटे रह जाते हैं, पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं। लोहे और मैंगजीन को कमी पौधों पर फेरस सल्फेट और मैंगनीज सल्फेट विलयन छिड़क-कर दूर की जाती है।

जस्ते की कमी से पौधों की पात ऊति (life tissue) खत्म हो जाती है। तम्बाकू के पौधों की नीचे की पत्तियों में धब्बे पड़ जाते हैं। जिन पौधों की जड़ें अधिक फैली होती हैं वे सहज ही जस्ता ले लेते हैं।

मोलिब्डिनम मुख्यत: नाइट्रेट आयनों का अमोनियम आयनों में अवकरण करने में सहायक होता है। फली वाले पौधे इसकी अनुपस्थिति में नाइट्रोजन स्थिर नहीं कर पाते। इसकी कमी अमोनियम मोलिब्डेट देकर पूरी की जा सकती है।

बोरान का कार्य मुख्यत: जड़ों द्वारा लिये कैल्शियम को पूरे पौधे में फैलाना है। इसकी कमी से अंकुर, जड़, फूल, आदि सब अविकसित रह जाते हैं। इसकी कमी मिट्टी में सुहागा मिलाकर पूरी करते हैं।

प्राय: बाजार में बिकने वाले उर्वरक के बोरों पर ३ संख्याएं लिखी मिलती हैं, जैसे ५–१०–५। ये संख्याएं मिश्रित उर्वरकों के बोरों पर लिखी रहती हैं। ये पौधे के लिए नितान्त आवश्यक तत्त्व नाइट्रोजन, फास-फोरस, पोटैशियम की प्रतिशत मात्राएं हैं, अर्थात् उस उर्वरक विशेष के प्रयोग से पौधे को कितने प्रतिशत नाइट्रोजन, कितने प्रतिशत फासफोरस (P_2O_5 के रूप में) और कितने प्रतिशत पोटैशियम (K_2O के रूप में) प्राप्त हो सकती है।

भूमि में कभी-कभी एक से अधिक तत्त्वों की कमी होती है। अत: एक उर्वरक से काम नहीं चल सकता। अब या तो अनेक उर्वरक प्रयोग किये जायें, अन्यथा ऐसे मिश्रण प्रयोग किये जायें जिनमें अनेक उर्वरक या पोषक तत्त्व आवश्यक मात्रा में मिश्रित हों। ऐसे उर्वरकों की जो भूमि के लिए आवश्यक एक से अधिक तत्त्वों की आवश्यकता पूरी करें, मिश्रित उर्वरक कहते हैं। इन यौगिकों का कोई रासायनिक सूत्र नहीं होता। ये मिश्रण हैं, और मिश्रण में अवयवों की मात्रा घट-बढ़ सकती है। किन्तु इन्हें विशिष्ट मापदण्ड का बनाया जाता है, और संख्या के रूप में ऊपर लिखी मात्रा ही इनका सूत्र कही जा सकती है।

मोटे तौर पर इन्हें दो भागों में बांट सकते हैं—(१) निम्न विश्लेषण उर्वरक, (२) उच्च विश्लेषण उर्वरक।

निम्न विश्लेषण उर्वरकों में तीनों तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा का जोड़ १४ से अधिक नहीं होता।

उच्च विश्लेषण उर्वरकों में तीनों तत्त्वों की प्रतिशत मात्रा का जोड़ १४ से अधिक होता है।

मिश्रित उर्वरकों के लाभ

दो-तीन की जगह एक ही मिश्रित उर्वरक से काम चल जाता है, इस प्रकार, खर्च कम होता है और परिश्रम भी कम करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न उर्वरक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि में विभिन्न परिस्थितियों में दिये जाते हैं। मिश्रित उर्वरक में अनेक तत्त्व एक ही परिस्थिति में भूमि को दिये जा सकते हैं। प्रयोगों से पता चला है कि अकेले उर्वरकों की अपेक्षा मिश्रित उर्वरक अधिक प्रभावशाली है। विरल तत्त्वों को भी मिश्रित उर्वरकों के साथ सुगमता से दिया जा सकता है। भूमि में उचित एवं उपयुक्त ph रखी जा सकती है अर्थात् अम्लीयता एवं क्षारीयता का नियन्त्रण किया जा सकता है। साधारण किसान भी इसे सहज में दे सकता है। संग्रह करने में असुविधा नहीं होती। पौधे का क्रमिक विकास होता है। किसी पोषकांश के लिए उसे प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। समय पर सब मिलता है।

मिश्रित उर्वरकों से कुछ हानियां भी हैं, जैसे यदि भूमि में केवल एक ही पोषक तत्त्व की कमी है, तो अन्य तत्त्व व्यर्थ ही नहीं रहेंगे, अपितु उनकी अधिक मात्रा फसल को हानि पहुंचायेगी। इसके अतिरिक्त किसान को अपनी भूमि का वास्तविक ज्ञान होना आवश्यक है कि किन-किन तत्त्वों की कमी है तथा कौन-सा मिश्रित उर्वरक (निम्न या उच्च) उपयुक्त रहेगा। बोरों पर लिखी संख्या से यह बोध नहीं होता कि उर्वरक बनाते समय कौन-कौन से पदार्थ प्रयुक्त किये गये हैं। उदाहरणत: नाइट्रोजन के लिए यूरिया प्रयुक्त किया गया है या अमोनियम सल्फेट, कौन कह सकता है?

मिश्रित उर्वरकों का निर्माण:

मिश्रित उर्वरकों के निर्माण के लिए चार पदार्थ आवश्यक हैं—(१) उर्वरक (२) उन्दालपक (३) ph नियन्त्रक और (४) पूरक।

उर्वरक : ये कई तरह के होते हैं—नाइट्रोजन देने वाले, फासफोरस देने वाले और पोटैशियम देने वाले उर्वरकों में से एक-एक छांट लिये जाते हैं।

उन्दालपक : मिश्रित उर्वरक की भौतिक दशा ठीक रहे, अर्थात् वह गीला न हो जाय, ढेले न बंध जायें, बाष्पशील पदार्थ बने—इस सब के लिए कुछ कार्बनिक पदार्थ मिला देते हैं। इनको उन्दालपक कहते हैं। चावल का छिलका, गोले (गरी) के ऊपर का छिलका, तम्बाकू का तना इत्यादि उन्दालपक की तरह प्रयुक्त होते हैं। उन्दालपक की मात्रा लगभग ५० किलो ग्रा. प्रति टन रखते हैं।

ph नियन्त्रक : अमोनियम सल्फेट, यूरिया आदि कुछ ऐसे उर्वरक हैं जिनके प्रयोग से भूमि अम्लीय होती है। यदि ये पदार्थ मिश्रित उर्वरक में प्रयुक्त किये जाते हैं, तो चूना या चूने का पत्थर आदि कुछ क्षारीय पदार्थ भी उनका प्रभाव नष्ट करने को मिला देते हैं। इस प्रकार भूमि पर नियन्त्रण रहता है। परिस्थिति विशेष (अम्लीय या क्षारीय) में पौधों को पोषकांशों की प्राप्ति होना सम्भव नहीं है।

मिश्रित उर्वरकों से कई लाभ हैं। दो-तीन उर्वरकों की जगह एक ही से काम चल जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरक : किसी पदार्थ में उसके गुणों पर प्रभाव डाले बिना जो वस्तु उसका भार बढ़ा दे, उसे पूरक कहते हैं। मिश्रित उर्वरक में भी पूरक आवश्यक है, अन्यथा पोषक तत्वों की मात्रा बहुत अधिक रहेगी। वालू-रेत, राख, पिसा हुआ कोयला, मिट्टी आदि प्राय: पूरक के रूप में प्रयुक्त होते हैं। पूरक का भी सस्ता और सहज उपलब्ध होना आवश्यक है। पूरक की मात्रा गणना करके निकालते हैं। इतना पूरक मिलाते हैं कि नाइट्रोजन, फास-फोरस व पोटेशियम की वांछित प्रतिशत मात्रा मिल जाये।

घर पर मिश्रित उर्वरक बनाना

उत्साही, पढ़ा-लिखा किसान मिश्रित उर्वरक घर पर भी बना सकता है। वैसे भी यदि ताजा मिश्रित उर्वरक दिया जाय, तो अधिक लाभदायक है। फिर तुरन्त बनाये उर्वरक के ढेले नहीं बंधते और उसे मिट्टी में आसानी से मिलाया जा सकता है। किसान अपने बनाये उर्वरक का अपनी फसल पर प्रभाव भी देख सकता है और इस प्रकार भविष्य में अवयवों में परिवर्तन कर सकता है। यदि आवश्यक पदार्थ सस्ते उपलब्ध हों, तो घर पर बनाया उर्वरक सस्ता भी पड़ सकता है। किन्तु व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि आवश्यक पदार्थ या तो सहज उपलब्ध नहीं होते और यदि उपलब्ध होते हैं, तो सस्ते नहीं पड़ते। कारखाने वाले व्यापारी थोक में अधिक माल खरीदते हैं, अतः उन्हें सस्ता पड़ता है। दूसरे, घर पर अवयवों को बारीक चूर्ण करने तथा भली-भांति मिलाने के लिए उचित मशीनें नहीं होतीं। इसलिए मिश्रित उर्वरक भी अच्छी किस्म का नहीं बन पाता। तीसरे, अनेक पदार्थ दुर्गन्धयुक्त होने या विस्फोटक या विषैले होने के कारण घर पर संगृहीत नहीं किये जा सकते।

संग्रह

मिश्रित उर्वरकों को शुष्क स्थान पर संगृहीत करना चाहिये। कच्चे फर्श या नमी वाले स्थान पर संग्रह नहीं करना चाहिये, अन्यथा ढेले बंध जायेंगे। पक्के फर्श पर भी नीचे तख्ते या तिरपाल बिछा लेना अच्छा रहता है। बोरों के बहुत ऊंचे ढेर भी न लगाये जायें, अन्यथा ऊपर के बोरों के दबाव से नीचे के बोरे दबकर ढेलों में जम जाते हैं।

बिना चालक के चलने वाला ट्रैक्टर

रूस में एक ऐसे ट्रैक्टर का विकास किया गया है जो बिना किसी मनुष्य के नियन्त्रण के स्वयं खेतों की जुताई कर सकता है। इस विधि में विद्युत मोटर के शाफ्ट में एक दर्पण और चकती लगा दी जाती है। खेतों से परावर्तित होकर आने वाली प्रकाश-किरणें ऊर्ध्वाकार रूप से नेत्रताल में पड़ती हैं और इसके द्वारा पिक-अप के एक कक्ष में स्थित प्रकाश सुग्राहक तत्व पर प्रक्षेपित की जाती हैं। इस प्रकार घूमते हुए दर्पण को खेत के जुते हुए एवं बगैरजुते हुए भाग का पता चल जाता है, क्योंकि दोनों प्रकार के खेतों से प्रकाश भिन्न मात्रा में परावर्तित होता है।

इस पिक-अप में एक प्रकाश-विद्युत् सैल तथा एक बिजली का बल्ब होता है जिनके बीच एक चकती घूमती रहती है। इसका क्रिया द्वारा प्रकाश विद्युत-ऊर्जा में बदल जाता है और ट्रैक्टर के अगले पहियों का तत्काल संवेग मिलता है।

ये संकेत पिक-अप द्वारा इलेक्ट्रानिक नियन्त्रक को भेज दिये जाते है जो ट्रैक्टर की गति से सम्बन्धित आदेश देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्त्रोद्योग में रसायन एवं भौतिकी

राजकुमार शर्मा, एम. एस-सी.

पर्किन के समय से लेकर आज तक रजकों की कथा अथवा स्वान एवं कार्डीनेट के काल से आज तक की आधुनिक महीन और चमकदार वस्त्रों की कहानी फिर से दोहरानी पड़ेगी तथा उन अनेक आविष्कारों का पुनः वर्णन करना पड़ेगा जिन्होंने मनुष्य को समृद्धशाली बनाने और लाभान्वित करने के साथ-साथ कभी-कभी मानवता को लांछित और पददलित भी किया है। लेकिन ऐसी गाथाएं पहले ही इतनी वृहत् हैं कि अब उनमें और वृद्धि करना अथवा उन्हें समुन्नत करना अधिक सम्भव नहीं है। वस्त्रोद्योग में रसायन-विज्ञान के प्रयोग के सम्बन्ध में उसके दुरुपयोग तथा विध्वंसक प्रयोजनों के लिए इस्तेमाल का भी प्रश्न नहीं उठता, जिससे उसका औचित्य सिद्ध किया जाय अथवा भर्त्सना की जाय।

रसायनज्ञ का काम मन्द गति का एवं श्रम-साध्य है, परन्तु अत्यन्त रोचक और प्रायः उत्तेजक होता है। वह उस शिल्पी की भांति है जो कुछ सोचता है और फिर एक स्थूल योजना बनाता है, विस्तार करता है, उसमें काट-छांट करता है और कभी-कभी उसे रद्दी की टोकरी में डालकर फिर नये सिरे से सोचने का कार्य करता है, और तब तक सन्तुष्ट नहीं होता जब तक उसका भवन बनकर खड़ा नहीं हो जाता और लोग देखकर प्रशंसा नहीं करते।

सूती वस्त्र में रेशमी चमक

कभी-कभी साधारण दैनिक कार्य करने वाले रसायनज्ञ समझते हैं कि रसायन का यश प्रचार करने वाले अत्युक्ति करते हैं और शायद औरों से अधिक एक वस्त्र-रसायनज्ञ मर्सरीयन विद्या के आविष्कारक से ईर्ष्या करते समय यह भूल जाता है कि वह आविष्कार संयोग और सौभाग्य की बात थी और स्वयं रसायन को उसका विशेष श्रेय नहीं है। उस इक्कीस वर्षीय नवयुवक आविष्कारक ने सूती कपड़े को रेशमी बनाने का प्रयत्न भी नहीं किया था, और न उसको यह आशा थी कि दहक्षार उपचार से क्रेप-जैसा मन्द रूप उत्पन्न होता है। यह उसका सौभाग्य ही था कि उसने यह देख लिया, सूती वस्त्र को तानकर दहक्षार से उपचारित करने के बाद धोने से उसमें रेशमी चमक आ जाती है। इस प्रकार के सूक्ष्म अवलोकन और तथाकथित छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने से अनेक ऐसी वस्त्र-विधाओं का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व प्रकाश में आया जिनमें कालान्तर में बहुमूल्य वाणिज्यिक फल प्राप्त हुए।

इन बातों से ऐसा लग सकता है कि मर्सरीयन के जन्मदाता की खिल्ली उड़ायी जा रही है। किन्तु ऐसी बात कदापि नहीं है। यह प्रायः निश्चित है कि युवक होरेसलो ने मर्सर के इस अनुभव की पृष्ठभूमि में कि दह-सोडा के उपचार से सूती कपड़ा सिकुड़ जाता है। तथा रंगाई के लिए उसकी उपयोगिता बढ़ जाती है, यह सोचा कि इस उपचार को दूसरे ढंग से करने से कपड़े पर दूसरे नये प्रभाव भी उत्पन्न किये जा सकते हैं। और कदाचित् वह भी उसी प्रकार का आचरण करता जैसा आधुनिक रसायनज्ञ करते हैं। शायद दह-सोडा के स्थान पर दहपोटाश इस्तेमाल करता, जलीय क्षार के बजाय उसका एल्कोहलीय विलयन प्रयोग करता, ऊंचे-नीचे ताप और सान्द्रण का प्रभाव जांचता और 'तीर नहीं तुक्का' वाली पुरानी अनुभवजन्य रीति का अनुसरण करता तथा ऊंचे संपीड का प्रयोग करता। फिर यदि उससे सन्तोष नहीं होता, तो···संपीडन की जगह प्रसारण का प्रयोग किया और उसे आशातीत फल भी प्राप्त हुआ।

एक प्रेरणा का सूत्रपात

यह तो हुई अटकलबाजी वाली बात, लेकिन 'मर्सराइजेशन' शीर्षक अपनी पुस्तक में जी. टी. मर्शि ने जो सुनिश्चित तथ्य वर्णन किया है वह भी उल्लेखनीय है। लो ने स्वंय कहा है कि मेरा कार्य मर्सर के कार्यो और अनुभवों पर आधारित है। उसके इस सुझाव से कि प्रबल दहसोडा कपड़ों के रंगाई-गुणों में परिवर्तन उत्पन्न करता है, मुझे उसके अन्य प्रभावों की जांच करने की प्रेरणा प्राप्त हुई।

वार नामक उनके सहयोगी ने भी यह उल्लेख किया है कि दहसोडा के उपचार से कपड़ों की सम्भाव्य सिकुड़न रोकने के ध्येय से लो ने उसके दोनों सिरों को कसकर तान दिया और तब उस पर दहसोडा लगाया। इससे सिकुड़नें तो बच गयीं और साथ ही उसकी चमक इतनी बढ़ गयी कि लो ने मजाक में कहा, 'मैंने सूती कपड़े को रेशमी बना दिया।'

यदि हम वस्त्रोद्योग की सफलता में समस्त विज्ञान के योगदान की समीक्षा करें, तो हमें स्वीकार करना होगा कि सूत अथवा वस्त्र को छोड़कर स्वयं प्राकृतिक तन्तुओं की उन्नति में रसायन का कार्य चाहे जितना भी महत्त्वपूर्ण हो, लेकिन है अंश-मात्र ही। सचमुच हमारी सम्भावनाएं बड़ी सीमित हैं; फलतः हमें विशेषरूप से तन्तुओं की श्लेषिका-रचना को अपरिवर्तित अथवा तनिक संशोधित रूप में ही छोड़ देने के लिए बाध्य होना पड़ता है, क्योंकि उनकी इसी रचना पर उनकी तनाव-सामर्थ्य तथा मुड़ने के और लचीलेपन के गुण निर्भर होते हैं। परन्तु कृत्रिम तन्तुओं में ऐसी कोई अवरोधी सीमा नहीं होती। उनकी श्लेषिका रचना को संशोधित करके उनका तनाव गुण तथा लचीलेपन का नियन्त्रण किया जा सकता है। अतः रसायनज्ञ को कीलन भौतिकी तथा एक्स-किरणों का प्रयोग अथवा इन विषयों पर कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के सहयोग से कुछ विशिष्ट फल प्राप्त करने के लिए सार्थक प्रयत्न करना चाहिये।

हम ऐसे अखण्ड कृत्रिम तन्तुओं की बात सोचते हैं जो रेशम, कपास अथवा लिनेन से कहीं उत्तम हों, परन्तु इनके एक्स-किरण चित्रों से यह जान पड़ता है कि इस दशा की सफलता के लिए इनकी रासायनिक रचना की अपेक्षा भौतिक रचना की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। रेशम सदृश तन्तु की श्लेषिका को आन्तरिक भाग में समानान्तर, परन्तु उसके चारों ओर प्रत्यानुस्थापित (dis-oriented) होना चाहिये। कृत्रिम कपास तन्तुओं में प्राकृतिक कपास के सर्वोत्तम गुण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

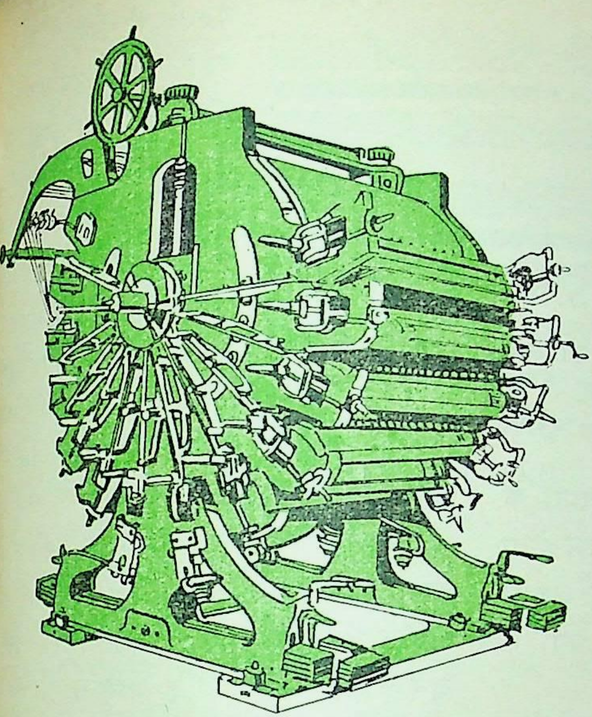

कपड़ों पर डिजाइन छापने वाली एक आधुनिक मशीन। क्या यह सिर्फ भौतिकी की प्रेरणा है?

नाने के लिए उसे रबर की ऐसी नली की तरह होना चाहिये जो हवा निकाल देने से चपटी हो गयी हो लेकिन उस पर कुन्तकल तन्तु का अथवा श्लेषिका का आवरण होना चाहिये। ऐसी रचना तैयार करने में अकेले रसायन-विज्ञान सफल नहीं हो सकता बल्कि रसायन एवं भौतिकी दोनों मिलकर इस उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं।

आसंजनशक्ति-सम्बन्धी सम्भावनाएं

कारखानों के रसायनज्ञों के कार्य मुख्यत: तन्तुओं की प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करना, उनके गुणों में वृद्धि करना तथा उनकी प्राप्ति बढ़ाना, उत्पादन खर्च घटाना, क्षेप्यों का उपयोग करना तथा त्रुटियों के कारण खोज निकालना है। वे विज्ञान एवं उसकी नयी-नयी रीतियों का अपने कार्य विशेष में प्रयोग करना चाहते हैं और समस्त उद्योग को लाभान्वित करना चाहते हैं।

कारखानों में विज्ञान और अनुसन्धान का बोध लोग केवल उन कार्यों से करते हैं जो रसायनज्ञ करता रहता है और जो किसी प्रकार लाभदायक भी होते हैं। लेकिन यह कदाचित् ही कोई अनुभव करता है कि वह छोकरा भी उसका भागीदार है जो सूत्रांक एवं सूत की लम्बाई की परीक्षा करता है अथवा विरजंक विलयनों की प्रबलता की जांच करता है। विज्ञान तथा अनुसन्धान के प्रतिरोध या खुले विरोध पर विजय प्राप्त करने का एकमात्र रास्ता यह है कि कर्मियों और कर्मशाला प्रबन्धक (works manager) को यह समझाया जाय कि विज्ञान और अनुसन्धान केवल परीक्षण, संपरीक्षण तथा सम्बद्ध कार्यकर्ताओं की पारस्परिक कठिनाइयों के समाधानार्थ साधनों की खोज की ही गौरवान्वित संज्ञा है।

यद्यपि वस्त्र अनुसन्धान एवं आविष्कारों में साधारणतया भौतिकी की ही प्रेरणा मानी जाती है, लेकिन उसमें रसायनज्ञ का भी बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य भाग है। यदि एक ऐसा सीमेण्ट मिल जाय जो तन्तुओं को एक-दूसरे से जोड़ सके और उतना ही अविलेय हो जितना तन्तु स्वयं होता है, तो कदाचित् अधिकांश प्रयोजनों के लिए कताई और बुनाई की आवश्यकता ही न रह जाय। ऐसे सीमेण्ट की अणु मोटाई के स्तरों की ही आवश्यकता होगी। रंगाई और छपाई में भी ऐसे स्तरों के प्रयोग की असीम सम्भावनाएं हैं। जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी ने बिजली के तारों के पृथक्करण (insulation) के लिए उन पर जैसे एक पतले स्तर का प्रयोग किया है, उसी प्रकार एक दिन विविध तन्तुओं के लिए भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

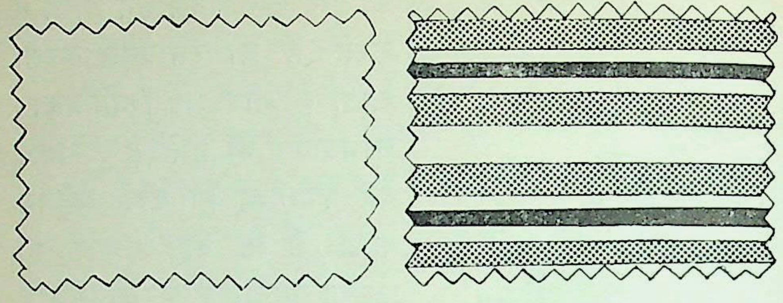

रंगीन कपड़े पर कई रंग की धारियों की छपाई पेचीदा नहीं है। मुख्य रंग पर विभिन्न रंगों की धारियां छाप दी जाती हैं, फिर मुख्य रंग आवश्यक स्थान से उड़ा दिया जाता है। (बायें) मुख्य रंग (दायें) धारियां

किया जायगा। उपर्युक्त बिजली के तारों के आवरण की आसंजक शक्ति इतनी प्रबल होती है कि उन्हें पीटकर चिपटाकर देने अथवा हजारों बार मोड़ने पर भी आवरण ज्यों के त्यों बने रहते हैं।

अण्डा केवल गाना गाकर उबाला जा सकता है

वर्तमान रंजकों की स्थिरता भी कुछ अधिक नहीं होती; परदों इत्यादि के रंग उड़ जाने की शिकायत उसे दूर करने के लिए पर्याप्त प्रेरणा दे सकती है। अधिस्वानिकी (Supersonics) भौतिक-विज्ञान का एक ऐसा विकास है जिसमें रसायनज्ञ की रुचि का होना आवश्यक है। कहा जाता है कि अधिस्वानिकी के प्रयोग से अब अण्डा केवल गाना गाकर उबाला जा सकता है। सचमुच इससे द्रवित धातुओं में चुम्बकत्व उत्पन्न किया जा सकता है। पनडुब्बियों का पता लगाया जा सकता है तथा वस्त्र-विज्ञान में सहाय कलिलों का संघनन किया जा सकता है। यह भौतिकी और रसायन के समन्वय-सहयोग का उत्तम उदाहरण है, और वस्तुत: किसी बड़ी समस्या के हल में यह समन्वय अनिवार्यत: आवश्यक है।

वस्त्रोउद्योग में रसायन का प्रभाव केवल बढ़ ही नहीं रहा है, वरन् उसका वेग भी तीव्रतर होता जा रहा है और अन्य विज्ञानों से होड़ ले रहा है। पच्चीस वर्ष पूर्व अमरीका का वस्त्रोद्योग नगण्य-सा था परन्तु आज वह महत्त्वपूर्ण स्थिति में है। वहां की प्रयोगशालाएं प्रगतिशील एवं उन्नतिशील हैं, एतदर्थ उन्हें सफलता प्राप्त होना अवश्यम्भावी है। यह उल्लेखनीय है, कि १९१६ में अमरीका में केवल १९ औद्योगिक अनुसन्धानशालाएं थीं और आज लगभग २,००० हैं।

सेलुलोज, सेलुलाइट तथा रेयान

रासायनिक भाषा में सेलुलोज को कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrate) कहते हैं, अर्थात् उसमें कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन होता है तथा एक अणु में अन्तिम दो तत्त्वों का अनुपात जल के समान होता है। सेलुलोज इस वर्ग के सर्वाधिक निष्क्रिय यौगिकों में से है।

सक्रियता के इस अभाव से ही यान्त्रिक ढंग से बने इसके सामान बड़े टिकाऊ होते रहे हैं।

जब सेलुलोज को वानस्पतिक पदार्थों से एकत्र किया जाता है, तो उसकी रचना तान्तव (fibrous) होती है। इसके तन्तु अपनी औसत मोटाई के १००-१००० गुने लम्बे होते हैं। शीघ्र बढ़ने वाले पौधों के तन्तुओं की औसत लम्बाई ½ इंच होती है। किन्तु कपास के बीजों के बाल १ इंच लम्बे होते हैं। और वास्ट तन्तु की लम्बाई २ इंच होती है।

प्रारम्भिक सेलुलोज-उद्योग में वस्त्र बनाने के लिए केवल शीघ्र पृथक किये जाने वाले लम्बे तन्तु ही प्रयोग किये जाते हैं। रस्सी, रस्सियां तथा बोरी बनाने वाली सुतली के लिए ऐसे छोटे बास्ट तन्तु इस्तेमाल किये जाते थे, जो विधायन में पादपस्थित अपनी तन्तु-बण्डल अवस्था बनाये रख सकते हैं।

प्राकृतिक तन्तुओं के प्राय: अपरिवर्तनीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिमाण के कारण औद्योगिक विकास में काफी बाधा अनुभव की गयी। इस बाधा का निवारण सेलुलोज को विलेय अथवा प्लास्टिक अवस्था प्रदानकर विक्षेप्य (dispersive) बनाकर ही किया जा सका। एतदर्थ शुद्ध सेलुलोज पर मिश्रित नाइट्रिक और सल्फ्यूरिक अम्लों की क्रिया कराकर सेलुलोज नाइट्रेट बनाना पड़ा। सेलुलोज नाइट्रेट के उत्पादन का प्रथम वर्णन ब्रैकोनांट ने १८३३ में किया था, परन्तु उस समय केवल विस्फोटक गुणों पर अधिक ध्यान दिया गया। १८५५ में पार्क्स ने सेलुलोज नाइट्रेट में कुछ मृदुकर्मक अथवा प्लास्टिक कर्ता मिलाकर तापी-प्लास्टिक (thermoplastic) पदार्थ बनाने का सुझाव दिया। अन्ततः १८६८-१८७५ की कालावधि में स्पिल ने इसके लिए कपूर और अल्कोहल का प्रयोग करके इसे औद्योगिक रूप से सफल बनाया। उसी समय सेलुलाइड के एक व्यापक उद्योग की नींव पड़ी और तभी से तापी-प्लास्टिक ढालने योग्य पदार्थों का उत्पादन होने लगा।

स्वान ने एक नये प्रयोग की सम्भावना का अनुभव किया

सेलुलाइड के उत्पादन के लिए विस्फोटक बनाने में प्रयुक्त होने वाले सेलुलोज नाइट्रेट की अपेक्षा कम नाइट्रोजन मात्रा वाला सेलुलोज नाइट्रेट इस्तेमाल किया जाता है। सेलुलोज नाइट्रेट को यन्त्रों द्वारा चूर्ण करके उसे कपूर (प्राय: ३०%) के साथ गूंथा तथा अल्कोहल डालकर उसका पूर्ण विक्षेपण किया जाता है। इसी समय रंग पदार्थ अथवा रंग द्रव्य भी छोड़े जाते हैं। इसके बाद उष्ण-वेल्लन करते तथा सुखाते समय अल्कोहल उड़ जाता है, तथा सेलुलाइड की सिलें, चद्दरें अथवा छड़ें बना ली जाती हैं, जिन्हें आवश्यकतानुसार सांचे में ढालने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

सर्वप्रथम वाणिज्यिक पैमाने पर उत्पन्न कृत्रिम रेशम का पैठिक पदार्थ भी सेलुलोज नाइट्रेट ही था। १७३४ में र्‌यूमर ने आश्लेषी पदार्थ से कताई अथवा खिंचाई द्वारा रेशम-जैसे रेशे बनाने का सुझाव दिया था। आगे चलकर १८४२ में सूक्ष्म छिद्र वाले एक ऐसे कर्तानांग (Spinneret) के प्रयोग का सुझाव दिया गया जिसके द्वारा पुंजि को खींचकर रेशे बनाये जा सके। परन्तु काफी समय तक यह सुझाव कार्यान्वित न हो सका। १८८० में विद्युत् दीपों के लिए अखण्ड संतन्तु बनाये गये, जिनसे वस्त्रों के लिए सूत बनाने में महती प्रेरणा मिली।

स्वान ने १८८३ में दीपों के लिए संतन्तु बनाने की रीति का पेटेण्ट लिया। उसी ने वस्त्रोद्योग में ऐसे धागों के प्रयोग की सम्भावना का अनुभव किया तथा १८८५ में कृत्रिम रेशम के नाम से कुछ नमूनों का प्रदर्शन भी किया।

क्यूप्रिक हाइड्रोक्साइड के अमोनिया विलयन में सेलुलोज के विक्षेपण का श्रेय श्वीजर तथा एक अन्य समकालीन रसायनज्ञ

कपड़े पर डिजाइन छापने के लिए ब्लाक प्रयुक्त होते हैं। ये ब्लाक लकड़ी के होते हैं और डिजाइनें तांबे के तारों की बनी होती हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मसंर को दिया जाता है। अन्ततः यहाँ रेयन उत्पादन की एक दूसरी विधा का आधार बना जिसमें सेलुलोज नाइट्रेट विधा की तरह आग लगने का जोखिम न था। इस विधा से बारीक तथा मजबूत सूत भी बनने लगे, लेकिन यह थोड़ी जटिल थी तथा विक्षेपण बनाने और प्रयुक्त रसद्रव्यों की पुनः प्राप्ति में कठिनाई होती थी। यद्यपि इस विधा से सूत तो १८८५ में तैयार कर लिया गया, लेकिन उसका वाणिज्यिक उत्पादन १८९५-१९०० के पूर्व सम्भव नहीं हुआ।

एक सब से बड़ी आधार विधा

रेयन बनाने की क्युप्रामोनियम विक्षेपण विधा की विशेषता यह है कि कताई के समय काफी अधिक तनाव प्रयुक्त किया जा सकता है, जिसके फलस्वरूप प्रारम्भिक अवस्था में ही अति सूक्ष्म तन्तुक बना लिया जाता है, जो लाभ अन्य रीतियों में सम्भव नहीं था। तनाव कताई से प्राप्त सूत के भौतिक गुणों के कारण ही यह रीति बनी रह सकी, तथा विकसित भी हुई।

१९३२ में इस रीति से संसार के कुल उत्पादन का ३% रेयन तैयार होता था और आज यह उत्पादन बढ़कर ४% हो गया है। यह ज्ञातव्य है कि उत्पादन लगातार बढ़ रहा हैं।

१८९२ में क्रांस और बिवैन ने सेलुलोज विक्षेपण की एक विधा का आविष्कार किया जो आगे चलकर विस्कोज विधा कहलाने लगी। यह आजकल रेयन उत्पादन की सबसे बड़ी आधार विधा है। फिर भी यह उल्लेखनीय है, किसी कारण से १९१० तक यह विधा सफलतापूर्वक न अपनायी जा सकी।

विस्कोज नामक विक्षेपण से सूत तैयार करने के लिए उसे मुख्यतः सल्फ्यूरिक अम्ल और धात्वीय सल्फेट वाले संस्थापक उष्मक (Setting bath) में डुबाये कर्तानांग में से खींचा जाता है। इससे दह-सोडा का उदासीनीकरण भी हो जाता है तथा सेलुलोज व्युत्पत्ति के विच्छेदन से अखण्ड तन्तुक के रूप में सेलुलोज की पुनः प्राप्ति हो जाती है।

...और सूत की मजबूती बढ़ी

यद्यपि आरम्भ में इस रीति से कुछ मोटा सूत प्राप्त होता था, परन्तु आगे चलकर उसमें काफी उन्नति हुई और असली रेशम के समान या उससे भी अधिक बारीक सूत बनने लगे।

तनाव कताई की विधि से सूत की मजबूती बढ़ी और वे अब असली रेशम के सूतों के बराबर मजबूत होने लगे हैं। इसके प्रयोगों का क्षेत्र इतना बढ़ गया है कि आजकल विस्कोज विधा से संसार में प्रतिवर्ष १०० करोड़ पौण्ड का रेयन तैयार हो रहा है।

यह मात्रा संसार में असली रेशम की खपत का आठ गुना है। १९४० के पूर्व ७ वर्षों में संसार के कुल उत्पादन का औसत ८६% रेयान विस्कोज विधा से तैयार किया गया था, यद्यपि यह बात सभी देशों में एक समान नहीं थी।

रेयन उत्पादन की एक दूसरी विधा का भी औद्योगिक प्रयोग होता है। यह विलायक उद्वाष्पन कताई पर आधारित है। यह रीति मूलतः सेलुलोज नाइट्रेट के लिए निकाली गयी थी, लेकिन अब इसमें एसिटोन में विक्षेपित सेलुलोज एसिटेट प्रयुक्त होने लगा है। तदन्तर उपयोगी सूत तैयार करने में अनेक समस्याएं हल की गयी थीं और अन्ततः इसका उद्योग भी जम गया।

पिछले १७ वर्षों से संसार के कुल उत्पादन का ८-१०% रेयन उपर्युक्त रीति तैयार होता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कण्ट्रोल-डेस्क पर लगे हुए डायल की सूई बढ़ते-बढ़ते एक विशेष चिह्न तक पहुंच गयी। 'सावधान!' डेस्क पर बैठा हुआ आपरेटर बोला। उसकी दृष्टि डायल पर जमी हुई थी।

एक अन्य वैज्ञानिक ने दर्शकों को उस मेज से दूर हट जाने का संकेत किया जो कमरे के मध्य रखी हुई थी। सभी लोग तुरन्त वहां से हटकर कमरे की दीवारों के पास जा खड़े हुए।

लेसर
एक विचित्र आविष्कार

एस. प्रेमी

मेज पर एक डिब्बा रखा हुआ था जो देखने में पुराने ढंग का कैमरा लगता था। उसके सूराख के सामने स्टेनलेस-स्टील का बना हुआ ईंट की शक्ल का एक टुकड़ा था जिसकी लम्बाई कई इंच थी। उधर कण्ट्रोल-डेस्क पर बैठे हुए व्यक्ति का हाथ एक बटन की ओर बढ़ा। उसके साथ ही दर्शकों को उसने फिर सम्बोधित किया, 'कोई व्यक्ति प्रकाश के गोले की ओर न देखे।'

अगले ही क्षण लाल प्रकाश का एक प्रकाश उस कैमरा रूपी मशीन से निकलकर कौंधा। उसके साथ ही खटके की एक तेज आवाज भी सुनायी दी। लोगों ने देखा कि स्टील की उस मोटी ईंट के आर-पार एक सूराख हो गया था और उसके जले हुए किनारों से धुआं उठ रहा था। उस सारी प्रक्रिया में सेकण्ड के तीन हजारवें भाग के लगभग समय लगा था।

शीर्षक चित्र : पश्चिम जरमनी में लेसर द्वारा टेलीफोन करने की नयी प्रणाली विकसित की जा रही है—प्रयोग का एक दृश्य

यह किसी वैज्ञानिक कहानी का फिल्म-दृश्य नहीं था, अपितु वैज्ञानिकों को उस ध्वसकारी शक्ति का एक नमूना दिखाया गया था जो लेसर किरणों के भीतर विद्यमान है।

लेसर : एक आश्चर्यजनक मशीन

लेसर क्या है?

यह उस आश्चर्यजनक मशीन का नाम है जिसका आविष्कार हुए अभी मुश्किल से पांच वर्ष भी नहीं हुए हैं। इसने विज्ञान के संसार में तहलका मचा दिया है। जिस

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक के सिद्धान्त पर इसका आविष्कार हुआ है, उसे दो वर्ष पूर्व नोबल पुरस्कार मिल चुका है। इस समय कोई यन्त्र या मशीन ऐसी नहीं जो लेसर के समान ताप पैदा कर सके। विशेषज्ञ अब इसकी सहायता से नित्य नये कार्य पूर्ण करने के ढंग ढूंढ़ रहे हैं। इनमें कई कार्य ऐसे भी हैं जिन्हें बुद्धि नहीं मानती। उदाहरणस्वरूप, हिसाब-किताब करने वाली मशीन की गति को कई गुणा बढ़ाना, अन्तरिक्ष की खोज-बीन करना, कैंसर का इलाज करना। ये और इसी प्रकार के अन्य कार्य इससे किये जायेंगे। सबसे बढ़कर जिस बात पर विस्मय होता है, वह यह है कि लेसर की किरणें जहां हाइड्रोजन बम से अधिक विध्वसंकारी सिद्ध हो सकती , वहां किसी रोगी के प्राण बचाने के लिए पेनीसीलीन से भी उत्तम कार्य भर सकती हैं। इस बात का पता अभी हाल ही में उन अन्वेषणों के पश्चात् लगा है, जो अमरीकी डाक्टरों ने किये हैं।

इनमें से एक अन्वेषण दिसम्बर १९६३ में एक ऐसे व्यक्ति पर किया गया जो कई वर्षों से त्वचा-रोग से पीड़ित था। उसका छह बार आपरेशन हो चुका था। हर बार रोग की गिलटियां उसके शरीर से काटकर अलग की गयीं, किन्तु बाद में भी नयी गिलटियां पैदा हो जातीं। सर्जरी के अतिरिक्त ओषधियों से भी उस व्यक्ति का इलाज होता रहा, किन्तु रोग जड़ से न गया।

जब उस व्यक्ति पर लेसर को परखा गया, तो उसके सीने के दायें भाग से ऊपर कंधे तक तीन गिलटियां विद्यमान थीं। निचली गिलटी को लेसर की किरणों के दो फ्लैश लगाये गये। दरम्यानी गिलटी पर एक, और ऊपर वाली गिलटी को वैसी ही छोड़ दिया गया। छह सप्ताहों के पश्चात् डाक्टरों ने रोगी के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट दी, उसके अनुसार निचली गिलटी पूर्ण रूप से विलीन हो चुकी थी। सूक्ष्मदर्शी-निरीक्षण से यह ज्ञात हुआ कि वहां रोग के केवल कुछ चिह्न मात्र रह गये थे। किन्तु अधिकाधिक रूप से रोग-चिह्न समाप्त हो चुके थे। इस अन्वेषण का सबसे अधिक उत्साहजनक पक्ष यह है कि ऊपर वाली गिलटी के भी लगभग बीस प्रतिशत रोग-कीटाणु समाप्त हो चुके थे, यद्यपि उसका बिलकुल इलाज नहीं किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि लेसर की किरणों का प्रभाव शरीर में किसी अज्ञात रास्ते से गुजरकर नीचे वाली गिलटियों से ऊपर वाली गिलटी तक पहुंच गया था। त्वचा रोग के जिस रोगी पर लेसर से यह आपरेशन किया गया, उसे न तो अचेत किया गया और न चीर-फाड़ की नौबत आयी। जब उस व्यक्ति से पूछा गया कि क्या लेसर की किरणों से उसके शरीर में कोई जलन या दर्द महसूस हुआ, तो उसके उत्तर ने डाक्टरों को आश्चर्यचकित कर दिया। उसने कहा, 'मुझे यों अनुभव हुआ था जैसे किसी ने मेरे शरीर पर अंगुली से चोट लगायी हो।'

लेसर को और अधिक उपयोगी बनाने के प्रयत्न हो रहे हैं

एक ऐसी मशीन जो एक समय में अंगुली की चोट से एक मनुष्य के मांस में हिलने वाले घातक लोथड़े को इस प्रकार समूल निकाल दे कि अन्य स्नायुओं को कोई क्षति न पहुंचे और फिर वही मशीन दूसरे समय में कई इंच मोटी धातु की प्लेट में पलक झपकने से भी कम समय में छिद्र कर दे, ऐसी मशीन की असाधारण उपादेयता से किसे इनकार हो सकता है!

लेसर के उपयोगी और लाभकारी प्रभावों की खोज-बीन करने और इस मशीन को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रयत्न हो रहे हैं। क्या पता कि किसी दिन कोई वैज्ञानिक इसे हाइड्रोजन बम-जैसी खतरनाक चीज बना दे, किन्तु इसके साथ-साथ इस बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी पूर्ण आशा है कि सामान्य जीवन में इसकी उपादेयता इतनी अधिक हो सकती है कि अस्पतालों, कारखानों और अन्य कई संस्थानों में लेसर से मानव-जाति की सेवा के लिए बड़े बड़े काम लिये जाने लगेंगे।

कई देशों में लेसर पर सैनिक दृष्टि से प्रयोग किये जा रहे हैं, किन्तु इस बारे में अभी कोई स्पष्ट ब्योरा प्राप्त नहीं है। केवल सामान्य ढंग के अनुमान लगाये जा रहे हैं। इस बात की बहुत बड़ी सम्भावना है कि निकट भविष्य में रडार अपना वर्तमान महत्त्व और स्थान खो देगा और उसका स्थान लेसर ले लेगा। रडार उस यान्त्रिक व्यवस्था का नाम है जिसमें विशेष प्रकार की रेडियो तरंगों को सर्चलाइट की भांति किसी दिशा में फैलाकर उस ओर से आने वाले वायुयानों या शत्रु के गुप्त ठिकानों का पता चलाया जाता है और उनकी गतिविधि देखी जा सकती है। रडार की तुलना में लेसर की किरणें अधिक दूर तक अपनी शक्ति स्थिर रखने और दिशा का अधिक सही निश्चय करने की विशेषता रखती हैं। युद्ध क्षेत्र पर फायर करने वाली तोपों का निशाना ठीक रखने में लेसर एक महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा कर सकता है।

लेसर क्षेप्यास्त्रों को ध्वस्त करने के लिए

कई लोगों ने कल्पना से काम लेकर अधिक दूर तक सोचना आरम्भ कर दिया है। उदाहरणस्वरूप यह कि लेसर से एक ऐसा अस्त्र बना लिया जायेगा जो शत्रु के क्षेप्यास्त्रों को अपनी शक्तिमान किरणों का निशाना बनाकर मार्ग ही में ध्वस्त कर देगा या फिर इससे भी बढ़कर यह विचार कि एक न एक दिन वैज्ञानिक लेसर का कोई ऐसा अनोखा आविष्कार कर लेंगे जिसका एक बटन दबाने से वह भयानक 'मृत्यु की किरण' निकलेगी जिसका वर्णन अभी वैज्ञानिक कहानियों तक ही सीमित है। इस किरण की परिधि में आने

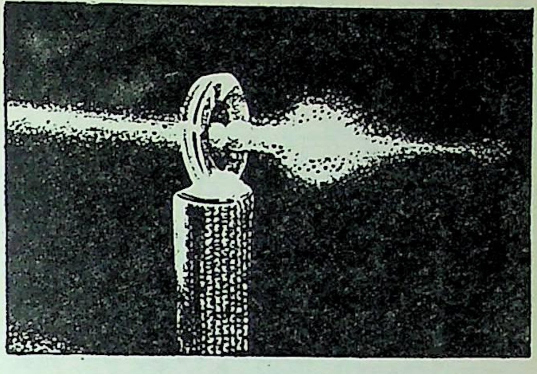

१०% लाल लेसर किरण को दूनी आवृत्ति के प्रकाश में परिवर्तित करने के सम्बन्ध में हाल ही में प्रयोग हुए—(फोर्ड मोटर कम्पनी की वैज्ञानिक प्रयोगशाला में प्रयोगाधीन एक लेसर उपकरण का रेखाचित्र)

वाला प्रत्येक व्यक्ति सेकण्डों में भस्म हो जायेगा। विशेषज्ञ जिन योजनाओं पर आजकल अति गम्भीरता से चिन्तन कर रहे हैं, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं—

खुली सड़कों पर मोटरें दौड़ रही हों। उनकी गति दो सौ मील प्रति घण्टा हो। ड्राइवर आराम से लेटा हुआ हो और लेसर कारों को इस प्रकार कण्ट्रोल किये हुए हो कि न गति में कमी आये और न एक-दूसरे से टकराने पायें। वैज्ञानिक इस प्रयोग में कई वर्षों से संलग्न हैं और ८० प्रतिशत से अधिक सफलता प्राप्त हो गयी है। कुछ देशों में व्यावहारिक रूप से प्रयोग किये भी जा चुके हैं। जब यह प्रयोग बिलकुल पूरा हो जायेगा तो यातायात की समस्या एक सीमा तक शेष न रहेगी। लोगों के व्यवसाय में और भी अधिक तेजी आ जायेगी।

लेसर की शक्ति से चलने वाले बड़े एटमी रिएक्टर बनाये जायें, जो बहुत ही कम मूल्य में समुद्र के पानी से नमक अलग करके भारी परिमाण में पीने का पानी उपलब्ध करें।

आन्तरिक्ष यात्रा के लिए ऐसे भारवाहक यान तैयार किये जायें जो बिना किसी यान-चालक के स्वतः निश्चित मार्ग पर यात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते रहें और केवल लेसर का प्रकाश उनका नियण्त्रण करे। इन बातों के अतिरिक्त वैज्ञानिकों का यह भी विचार है कि डाक और तार विभाग में लेसर बहुत बड़ी क्रान्ति ला सकता है। लेसर की किरणों के एक प्रवाह से लाखों व्यक्तियों की टेलीफोन पर बातचीत हो सकती है, संसार भर के रेडियो और टेलीविजन प्रोग्राम एक ही समय में दूसरे स्थान पर भेजे जा सकते हैं।

आखिर इस मशीन के अन्दर वह कौन-सा दैत्य बन्द है जो ऐसे अलौकिक कार्य करने की शक्ति रखता है? वास्तव में लेसर के अन्दर बहुत कम संख्या में छोटे और सादा कलपुरजे होते हैं। इनमें से एक तो तेज प्रकाश का बल्ब होता है जिसे फोटोग्राफर अपने स्टूडियो में रखते हैं, किन्तु इसकी शक्ल बहुतभिन्न होती नोन गैस की एक ट्यूब भी प्रकाश के रूप में उपयोग की जा सकती है।

दूसरी वस्तु एक कलम या सलाख है जो किसी साफ पदार्थ से बनायी जाती है। यदि पदार्थ गैस या द्रव्य अवस्था में हो, तो उसे एक सिलिण्डर-रूपी नलकी के अन्दर बन्द कर लिया जाता है।

लेसर का तीसरा भाग एक ऐसा संस्थान है जो पूरी मशीन को ठण्डा करता रहता है। गरमी की एक विशेष मात्रा इस मशीन में पैदा हो जाती है जिसे यदि खारिज न किया जाय, तो सब कल-पुरजे जलकर नष्ट हो जायें।

चौथी वस्तु वह लेंस है जो किरणों को एकत्र करके एक पतली धार की शक्ल में खारिज करता है।

इन सब भागों को एक विशेष ढंग से जोड़कर एक बक्स या डिब्बे की शक्ल के खोल में बन्द कर दिया जाता है। एक कंट्रोल-डेस्क अलग होता है जिसका आपरेटर लेसर के हर पुरजे की क्रिया को देख सकता है और उससे अपनी इच्छानुसार आवश्यक काम लेता है।

एक अनोखी प्रक्रिया : एक जादू

इस लेख के आरम्भ में जिस लेसर का वर्णन किया गया है, उसमें कृत्रिम रत्न की सलाख का उपयोग किया गया था। पहले उसके दोनों सिरे बड़ी सावधानी से घिसकर समतल बनाये गये थे, फिर उन्हें पालिश करके आईना-जैसा साफ बना दिया गया। एक सिरे को तो पूरी तरह साफ कर दिया गया, किन्तु दूसरा सिरा कम साफ रहा ताकि उसमें से प्रकाश प्रतिबिम्बित भी हो और आवश्यकता के समय बाहर भी निकल सके। प्रकाश के लिए जैनोन ट्यूब से काम लिया गया था जो रत्न की सलाख के गिर्द सांप के समान लिपटी हुई थी।

कृत्रिम रत्न का एक अंग क्रोमियम धातु का है। जब लेसर को चलाना होता है, तो प्रकाश बड़े परिमाण में रत्न की सलाख में इस प्रकार निरन्तर पहुंचाया जाता है, जैसे पम्प से हवा भरते हैं। एक समय ऐसा आता है कि उस प्रकाश के किसी एटम से एक विशेष प्रकार का कण पृथक हो जाता है जिसे विज्ञान की भाषा में 'फोटोन' कहते हैं। प्रकाश का यह कण या फोटोन सलाख के अन्दर चलने लगता है और कलई किये हुए सिरे से टकराकर वापस आता है। इस वापसी-यात्रा के मध्य किसी अन्य एटम से टक्कर खाकर वह अपने-जैसा एक और फोटोन उस एटम से स्वतन्त्र कर देता है। अब ये दोनों फोटोन चलते हुए सलाख के दूसरे सिरे तक पहुंचते हैं और वहां से जब टकराकर लौटते हैं, तो दो नये फोटोन निकलकर उनके साथ चलने लगते हैं। इस प्रकार हर फेरे में तोड़-फोड़ की यह प्रक्रिया बढ़ती जाती है और सलाख के भीतर चलायमान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फोटोनों का समूह बहुत ही अल्पावधि में एक जबरदस्त बाढ़ का रूप धारण कर लेता है। उधर मशीन के डायल पर लगी हुई सूई खतरे के निशान की ओर बढ़ने लगती है और जैसे ही वह उस निशान को पार करती है, फोटोनों का अथाह तूफान रत्न की नाल के आधी कलई वाले सिरे से गुजरकर बाहर आ जाता है। इस प्रकार प्रकाश की जो शक्तिशाली किरणें उत्पन्न होती हैं, लेसर उन्हें सहेजकर उनकी सूक्ष्म धार बना देता है और उनकी शक्ति को समेटकर और अधिक कर देता है। किन्तु उनकी लपट पलक झपकने से भी पहले समाप्त हो जाती है। यदि लेसर में कोई गैस प्रयुक्त की जाय, तो किरणों की शक्ति कम रहती है, किन्तु उनका प्रवाह जब तक चाहें, स्थिर रहता है। इसके अतिरिक्त भिन्न प्रकार के पदार्थ अलग-अलग प्रभाव देने वाली किरणें उत्पन्न करते हैं।

यह है उस जादू की वास्तविकता जो उस मशीन के अन्दर बन्द होता है। अंगरेजी का शब्द लेसर (Laser) जिन पांच अक्षरों को मिलाकर बनाया गया है, उनमें से प्रत्येक किसी पूरे शब्द का पहला अक्षर है। लेसर का अंग्रेजी में पूरा नाम है: Light Amplification by Stimulated Omission of Radiation; इसका अर्थ है, किरणों के उत्सर्जन के आसन में निरन्तर आन्दोलन और सम्पर्क पैदा करके प्रकाश की शक्ति को बढ़ाना। इस लम्बे वाक्य को संक्षिप्त करके इसे लेसर का नाम दिया गया है।

लेसर-प्रकाश और सामान्य प्रकाश में अन्तर क्या है

जो प्रकाश लेसर से निकलता है, उसमें और सामान्य सफेद प्रकाश में जो हमें सूर्य या बिजली के बल्ब से प्राप्त होता है, बड़ा अन्तर है। सफेद प्रकाश इन्द्रधनुष के रंग वाली किरणों से मिलकर बनता है, इसकी तुलना में लेसर की किरणें केवल एक ही विशिष्ट रंग रखती हैं, किन्तु मुख्य प्रश्न यह है कि उन किरणों की असाधारण शक्ति का रहस्य क्या है? बात यह है कि जब हम बिजली का अधिक ताकतवर बल्ब जलाते हैं, तो उसका प्रकाश चारों ओर फैल जाता है। यदि उस प्रकाश को किसी परावर्तक द्वारा सहेजकर एक विशेष दिशा में फेंकें जिस प्रकार रेल के इंजन की बत्ती का प्रकाश फेंका जाता है, तो उस एक दिशा में प्रकाश की मात्रा बहुत बढ़ जायगी, किन्तु इन किरणों का फिर भी पर्याप्त फैलाव शेष रहता है और ऐसा कोई ढंग नहीं है कि इन किरणों को एक बहुत ही सूक्ष्म धार बना दिया जाय। यह उद्देश्य लेसर ने पूरा किया है। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि लेसर के प्रकाश की कुल मात्रा एकत्र होकर सेकण्ड के कई लाखवें भाग में निकलती है। इसका उदाहरण यह है: किसी नल में से जब मामूली रफ्तार से पानी गिर रहा हो, तो और बात होती है, किन्तु यदि उसके नीचे एक बड़ी-सी बालटी रख दी जाय और फिर पूरी बालटी भर जाने के बाद एकदम उलट दी जाय, तो यह और बात है। संक्षिप्त शब्दों में इसे इस तरह समझें कि प्रकाश उत्पन्न करने का सामान्य ढंग यदि 'सौ सुनार का है' तो लेसर का ढंग 'एक लोहार का' है।

लेसर का आरम्भिक दृष्टिकोण : एक अभिकल्पना

आज से करीब पन्द्रह वर्ष पहले एक अमरीकी वैज्ञानिक डाक्टर चार्ल्स हार्ड टाउंज के मस्तिष्क में लेसर का आरम्भिक दृष्टिकोण उभरा। १९५१ की बसन्त ऋतु की एक सुबह वह फ्रैंकलिन पार्क के एक बेंच पर अकेला बैठा था। टाउंज, जो उन दिनों कोलम्बिया विश्वविद्यालय में भौतिकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्राध्यापक था, रेडियो लहरों से सम्बन्धित एक सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए वाशिंगटन आया हुआ था। बेंच पर बैठे-बैठे वह प्रकटतः पार्क के रंग-बिरंगे फूलों और प्रातःसमीर के झोंकों से आनन्दित हो रहा था, किन्तु उसका मस्तिष्क किसी और उधेड़बुन में लगा था। वह सोच रहा था, क्या ऐसी विद्युत् चुम्बकीय लहरें पैदा होना सम्भव है जिनकी लम्बाई सामान्य रेडियो लहरों की तुलना में लाखों या करोड़ों गुना कम हो। अकस्मात उसे यह विचार सूझा कि क्यों न यह काम एटम से लेने का प्रयत्न किया जाय। यह विचार अभी किसी और को नहीं सूझा था। टाउंज का अपना कहना है कि मैंने उसी समय जेब से एक पुराना लिफाफा निकालकर उस पर रेखाएं बनायीं कि एटम के अन्दर एक विशेष प्रकार का प्रकम्पन उत्पन्न करने के लिए कौन-कौन-सी शर्तों को पूरा करना आवश्यक होगा। इस प्रकार उस दृष्टिकोण का एक धुंधला-सा रेखाचित्र टाउंज के मस्तिष्क में तैयार हो गया। कोलम्बिया वापस आकर उसने अन्य सहयोगियों से भी इस बात का जिक्र किया। उसका एक शिष्य जेम्स गोर्डन, पी. एच-डी. की डिग्री के लिए टाउंज के दृष्टिकोण पर व्यावहारिक कार्य करने के लिए तैयार हो गया।

दो वर्ष तक टाउंज और गोर्डन अपनी प्रयोगशाला में कठोर परिश्रम करते रहे। उन्होंने प्रयोग में उपयोग लाये जाने वाले सामान में कई परिवर्तन किये और बहुत से ढंग परखे, किन्तु सफलता न मिली। इन अन्वेषणों पर सरकार के ५० हजार डालर भी खर्च हो गये जो प्रकटतः बिलकुल नष्ट हो गये थे। प्राध्यापक के मित्रों ने परामर्श दिया कि वह इस काम पर और समय नष्ट न करे। सच तो यह है कि स्वयं टाउंज भी निराश होने लगा था, किन्तु १९५३ के अन्त में एक दिन टाउंज कक्षा में पढ़ा रहा था कि कमरे का दरवाजा खुला और गोर्डन हांफता हुआ अन्दर आया। वह आते ही उल्लास से चिल्लाया, 'प्रोफेसर ! एटम के अन्दर वांछित प्रकम्पन उत्पन्न हो गया है।'

बस, फिर क्या था, टाउंज की कक्षा उसी समय समाप्त होकर एक निकटवर्ती रेस्तरां में चली गयी जहां उत्सव मनाया गया।

पहले चूहों पर

इस आरम्भिक अन्वेषण के वाद जिस मशीन या यन्त्र को बनाया गया, उसका नाम 'मेसर' रखा गया था। इसमें म अक्षर माइक्रो वेव शब्द से लिया गया था। शेष अक्षरों का क्रम वहीं है जो लेसर में है। १९५८ में टाउंज ने अपने सिद्धान्त को एक पग और आगे बढ़ाया और यह आशा प्रकट की कि इसी सिद्धान्त के अनुसार प्रकाश की बेहद शक्तिशाली लहरों को उत्पन्न करना भी सम्भव है। इससे संसार के बहुत से वैज्ञानिकों के दिमाग में प्रकाश-सम्बन्धी लेसर आविष्कार करने का उन्माद समा गया। अन्ततः ह्यास एयरक्राफट कम्पनी के प्रसिद्ध विशेषज्ञ थ्यू डारमे मैन ने कृत्रिम रत्न का लेसर तैयार कर लिया जिसका वर्णन ऊपर दिया गया है।

लेसर से त्वचा-रोग के विरुद्ध सफल प्रयोग पहले चूहों पर किया गया था और बाद में उसे मनुष्यों पर परखा गया। बोस्टन मेडीकल सेण्टर के कुछ डाक्टरों ने बहुत से चूहों के मुंह में उक्त रोग के कीटाणुओं को डाल कर उन्हें छोड़ दिया। कुछ दिनों के बाद गिलटियां उग आयीं और इतनी बढ़ गयीं कि चूहों के मुंह उनसे पूरी तरह भर गये। उसके बाद आधे चूहों को लेसर की किरणें इस प्रकार दी गयीं कि फ्लैश सेकण्ड के केवल तीन करोड़वें भाग तक गिलटी पर डाला जाता था। बीस से तीस दिन की अवधि के अन्दर इन चूहों में रोग के सभी चिह्न मिट गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु जिन चूहों का इलाज नहीं किया गया, वे सब मर गये। एक डाक्टर से प्रश्न किया गया, लेसर की किरणों से चूहे के शरीर में आर-पार सूराख क्यों न हुआ? उसने उत्तर दिया कि इन किरणों को मांस की नमी तुरन्त जज्ब करके अप्रभावित बना देती है। इस लिए उनका असर गिलटी की ऊपरी सतह तक ही सीमित रहा।

आंख के भीतरी परदे की वेल्डिंग

आपने सड़क पर जाते हुए हुए वेलडिंग की किसी दुकान पर कारीगर को लोहे के टुकड़ों को एक-दूसरे से जोड़ते हुए तो अवश्य देखा होगा, किन्तु आंख के भीतरी परदों की वेलडिंग के बारे में आपने कभी न सोचा होगा। विश्वास कीजिए, कि लेसर ने यह भी कर दिखाया। आंख की एक विशेष बीमारी होती है जिसमें आंख का भीतरी परदा रेटिना (retina) किसी कारण से डेले से पृथक हो जाता है। हमारी दृष्टि इस परदे पर कायम है। इसलिए यदि किसी व्यक्ति की आंख में यह नुक्स हो जाय, तो वह आंख बिलकुल अंधा हो जाता है। इसका इलाज सर्जरी से सम्भव तो है किन्तु यह बेहद नाजुक, पेचीदा और कष्टप्रद आपरेशन है। हाल ही में लेसर से इसका इलाज किया गया है। इस की किरणों को एक सूक्ष्मदर्शी से गुजारकर आंख के अन्दर इस प्रकार डाला गया कि वे बहुत ही सूक्ष्म धार के रूप में भीतरी परदे के किनारों से टकरायें। जिस स्थान पर कोई किरण पड़ी वहीं उसने परदे का जरा-सा किनारा डेले के साथ लगा दिया। इस प्रकार परदे के किनारों पर जगह-जगह जोड़ लगा दिये गये। बाद में जब इस वेलडिंग के जख्म भर गये, तो परदा अपने स्थान पर चिपक चुका था और रोगी को खोई हुई दृष्टि वापस मिल गयी थी।

लेसर की किरणें एक बार धरती से चांद तक और चांद से धरती तक यात्रा कर चुकी हैं। इस अभियान का विचार दो वैज्ञानिकों को केवल इस कारण पैदा हुआ कि उनके वायुयान के आगमन में एक बार असाधारण विलम्ब हो गया था। मैसाचुसेट्स इंस्टीट्यूट आफ टेक्नालोजी के दो राडार विशेषज्ञ, प्रोफेसर सम्लन और डाक्टर फयाको नवम्बर १९६१ की एक शाम को सैनिक हवाई अड्डे पर उस यान की प्रतीक्षा कर रहे थे। समय बिताने के लिए वे इधर-उधर की बातें कर रहे थे कि लेसर का जिक्र आ गया। आकाश पर चौदहवीं का चांद उदय हो रहा था। वे सोचने लगे कि क्या लेसर की किरणें लम्बे फासले के लिए राडार के रूप में प्रयुक्त की जा सकती हैं? अनुमान लगाने के लिए कागज की आववश्यकता अनुभव हुई। जेब में ढूंढ़ने के बाद डाक का एक लिफाफा मिला। उधर यान रन-वे पर उतर रहा था और इधर ये दोनों वैज्ञानिक अपनी योजना का संक्षिप्त रेखा-चित्र तैयार कर चुके थे।

लेसर से चांद की ओर फायर

सम्लन और फयाको की योजना में अमरीकी सेना के तीनों विभागों के साथ-साथ कई अन्य वैज्ञानिक संस्थानों ने भी असाधारण दिलचस्पी प्रकट की। दीर्घावधि

वायु में विद्युत् विसर्जन का एक दृश्य। यह दृश्य एक बृहत् पल्स लेसर (pulse laser) को फोकस करने से उत्पन्न होता है

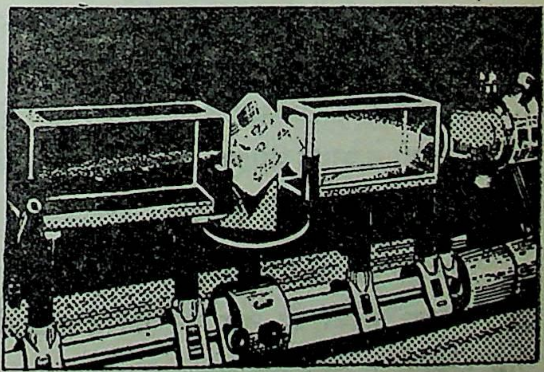

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद जब तैयारी पूरी हो गयी, तो निश्चित तिथि को एक लेसर दूरबीन के साथ लगा दिया गया। उससे चांद की ओर निशाना बांधकर किरणों के फायर किये जाने थे। साथ के एक अन्य कमरे में दूसरी दूरबीन का मुख भी चांद की ओर था। उसका काम यह था कि जब किरणें चांद को सतह से पलटकर आयें, तो वह उन्हें इकट्ठा करके एक ओस्लोग्राफ पर रिकार्ड कर दे। ऐन मौके पर हिमपात आरम्भ हो गया। लेसर की किरणें हिम की तरलता के कारण बिलकुल बेअसर होकर रह गयीं, इसलिए प्रयोग स्थगित कर दिया गया। दूसरी बार जब चांद आकाश पर उपयुक्त स्थान पर पहुंचा, तो उस समय मौसम बहुत अच्छा था। लेसर से चांदमारी शुरू हो गयी।

लेसर के फ्लैश चांद पर फेंके गये

एक मिनट के विराम के बाद प्रकाश का फव्बारा निकलता और चांद की ओर उड़ता। किरणें पेंसिल के समान मोटी धार बनाती थीं जो चांद तक पहुंचते-पहुंचते दो मील के फैलाव में टकरातीं। यदि लेसर के बजाय प्रकाश का कोई सामान्य ढंग प्रयुक्त किया जाता, तो उसकी किरणों का फैलाव हजारों मील होता। यही कारण है कि ऐसा प्रकाश बहुत ही कम मात्रा में चांद तक पहुंच सकता है। धरती से चांद तक दोतरफा फासला लगभग पौने पांच लाख मील है जिसे प्रकाश ढाई सेकण्ड में तय कर लेता है। किरणें अपनी यात्रा पूरी करके दूसरे कमरे वाली दूरबीन में रिकार्ड होती चली गयीं। उस रात लेसर के बहुत से फ्लैश चांद पर फेंके गये जिनमें से एक दर्जन से अधिक स्पष्ट रूप में रिकार्ड हो गये।

भ्रम पैदा हो गया है

इस प्रयोग की सफलता से कई लोगों ने क्षेप्यास्त्र विध्वंस करने और 'मृत्यु की किरण' पैदा करने वाले लेसरों के आविष्कार के बारे में चर्चा शुरू कर दी है। वास्तव में एक बड़ा भ्रम पैदा हो गया है। जब ये लोग कई इंच मोटी धातु की प्लेट में सूराख कर देने वाले प्रयोग को देखते हैं, तो यह भूल जाते हैं कि किरणों को लेंस की सहायता से सहेजकर एक बिन्दु पर केंद्रित किया जाता था और फिर प्लेट लेसर के बहुत समीप थी। जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जायेगी, किरणों का प्रभाव कम होता जायेगा।

हिसाब लगाया गया है कि क्षेप्यास्त्र में उड़ान के मध्य सूराख करने के लिए लेसर को अपनी वर्तमान शक्ति की तुलना में हजारों गुना अधिक शक्तिशाली बनाना पड़ेगा। जितनी शक्ति उस एक लेसर में लगेगी, उस से इतनी बिजली पैदा की जा सकती है जो एक छोटे से नगर की सभी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पर्याप्त होगी। •

भुट्टे की गुल्ली से प्लाईवुड का निर्माण

वन अनुसन्धान, देहरादून में किये गये परीक्षणों में पता चला है कि भुट्टे की गुल्ली उष्मा की कुचालक है। प्लाईवुड के क्रोड-द्रव्य में जो विशेषताएं होती हैं वे सब इसमें हैं। भुट्टे की गुल्ली को क्रोड के निर्माण में इस्तेमाल करने के लिए भी प्रयोग हुए। वैज्ञानिकों का मत है कि ऐसे क्रोड द्वारा निर्मित लकड़ी साधारण प्लाईवुड से अधिक हलकी और सस्ती होगी।

प्रतिजीवाणुओं की खोज

अर्बुद का नाश करने के लिए रूस में प्रतिजीवाणुओं की खोज की गयी है। ये प्रतिजीवाणु अर्बुद पीड़ित ऊतकों को नष्ट कर देते हैं। इनकी खोज द्वारा निश्चित रूप से अर्बुद के रोगियों को लाभ पहुंचा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

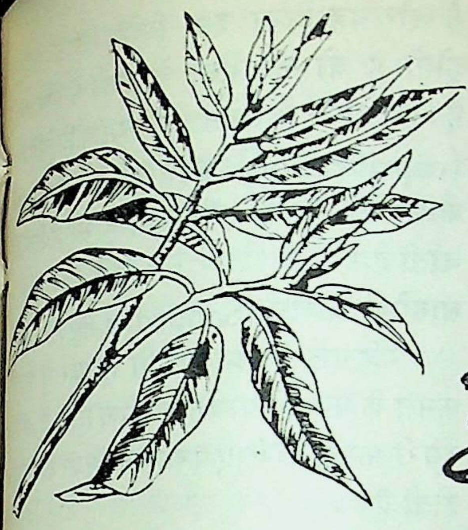

अंजीर और अड़ूसा

आर. एन. सिंह, एम.एस-सी.

कहा जाता है कि गूलर के फूल नहीं होते। इस तरह तो अंजीर के भी फूल नहीं होते। परन्तु यह कहना एक उपलक्षण मात्र होगा। वास्तव में पेड़-पौधों की एक जाति (genus) ही ऐसी होती है जिसके विषय में कहा जा सकता है कि इसमें फूल नहीं होते। यह जाति फाइकस (*Ficus*) कहलाती है, परन्तु इस जाति के विषय में जो प्रचलित धारणा है कि इसमें बिना फूल ही के फल लगते हैं, भ्रमपूर्ण है। तथ्य यह है कि इसके फूलों की रचना ही ऐसी प्रतीत होती है कि वे फल प्रतीत होते हैं। वनस्पति विशेषज्ञों ने यह सिद्ध कर दिया है कि फाइकस जाति के पेड़-पौधों के फूलों का स्तम्भक (thalamus) बढ़कर चारों ओर से अन्य भागों को ढंक लेता है और शीर्षभाग पर एक छिद्र मात्र शेष रह जाता है। इसके भीतर अनेक स्त्रीपुष्प तथा पुंपुष्प रहते हैं। इन पुष्पों से बाद में फल बनते हैं। इस प्रकार एक फल वास्तव में छोटे-छोटे फलों का संग्रह होता है। इस जाति के अन्तर्गत लगभग ६५ प्रजातियां (species) हैं जो संसार भर में फैली हुई हैं। अंजीर भी इसी जाति का एक पौधा है। पीपल, गूलर, पाकड़, रबर आदि जो हम नित्य देखते हैं, इसी जाति के अन्तर्गत आते हैं। परन्तु अंजीर इन सबसे महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसके फलों में बहुत से पौष्टिक पदार्थ पाये जाते हैं और इसका प्रयोग ओषधि तथा आहार, दोनों रूपों में होता है।

परिचय

प्राचीन काल से ही हमारे देश में अंजीर का व्यवहार होता आ रहा है। इसे संस्कृत भाषा में फल्गु कहते हैं। इसका लैटिन नाम फाइकस कैरिका (*Ficus carica*) है और यह मौरेसी (*Moraceae*) कुल की वनस्पति है। इसके छोटे या मध्यम आकार के पेड़ होते हैं। पत्तियां चौड़ी तथा किनारे ३-४ खण्डों में विभक्त होते हैं (चित्र-१)। इनका ऊपरी भाग खुरदरा तथा शिराएँ स्पष्ट दिखायी देती हैं।

अंजीर का पुष्पगुच्छ (inflorescence) विशिष्ट आकृति का होता है जिसका थैलामस बढ़कर चारों ओर से फूलों को ढंक लेता है। ऊपरी भाग पर एक छिद्र रहता है। फूलों की रचना तथा सेचन-क्रिया (pollination) के आधार पर अंजीर के कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

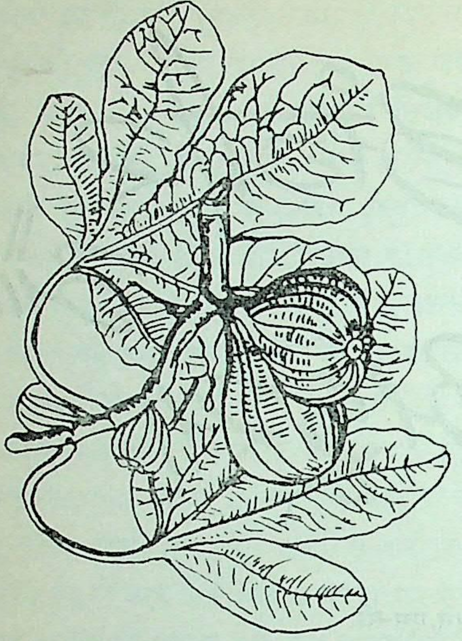

अंजीर के एक सामान्य वृक्ष की शाखा

भेद भी माने जाते हैं, जो निम्नलिखित प्रकार हैं—

सामान्य अंजीर (Common fig)

इस जाति के अंजीर में प्राय: स्त्रीकेशरीय (pistilate) पुष्प होते तथा फल पारथेनोकार्पिक (Parthenocarpic) होते हैं, अर्थात बिना गर्भाधान (fertilization) के ही फलों का निर्माण होता है।

कैप्रि फिग (Capri fig)

इस जाति में स्त्रीकेसरीय, तथा पुंकेसरीय दोनों प्रकार के पुष्प होते हैं। स्त्रीपुष्पों का योनि-सूत्र (style) बहुत छोटा होता है। इस प्रकार के स्त्रीपुष्पों में एक विशेष जाति का कीड़ा घुसकर वहां अण्डे देता है तथा उससे जब लारवा (larva) बनता है, तो एक प्रकार की उत्तेजना मिलती है, जिसके परिणामस्वरूप फल का निर्माण होता है। इस जाति में भी सेचन तथा गर्भाधान क्रिया की आवश्यकता नहीं होती।

स्मायर्ना अंजीर (Smyrna fig)

इस जाति के फूलों में परसेचन (cross-pollination) क्रिया की आवश्यकता पड़ती है और यह क्रिया इस विशेष कीट द्वारा होती है जो कैप्रिफिग के फलों से निकलता है। इस प्रकार के सेचन की क्रिया कैप्रिफिकेशन (caprification) कहलाती है। कभी-कभी कैप्रि फिकेशन की कृत्रिम विधि भी प्रयोग की जाती है।

सानपेड्रो अंजीर (Sanpedro fig)

यह एक मिश्रित जाति है जिसमें पहली फसल के फल तो पार्थेनोकार्पिक होते हैं, परन्तु दूसरी फसल के लिए परसेचन क्रिया आवश्यक होती है।

जलवायु तथा उत्पत्ति स्थल

अंजीर प्रारम्भिक रूप से एशिया माइनर के केरिका नामक स्थान का मूल निवासी माना जाता है, परन्तु अब यह संसार के उष्ण तथा शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में सर्वत्र उत्पन्न होता है। इसकी विशेष उपज भूमध्यसागरीय प्रदेश में स्पेन से टर्की तक तथा संयुक्त राज्य अमरीका, चिली, अरब, फारस, चीन, जापान आदि देशों में होती है। भारतवर्ष में पूना, सतारा, अहमदाबाद, बंगलौर, वेलारी, अनन्तपुर तथा सहारनपुर के जिलों में और पंजाब तथा कश्मीर प्रदेशों में इसके बाग मिलते हैं। हमारे यहां जो अंजीर होता है वह वास्तव में फाइकस कैरिका तथा देशीय जाति का मिश्रिण रूप है। अंजीर की उत्तम उपज के लिए शीतोष्ण जलवायु तथा थोड़ी रेत मिली हुई सघन तथा जहां पानी न रुकता हो ऐसी भूमि चाहिये। खाद तथा सिंचाई से भी फसल अच्छी होती है। फल पकने के समय शुष्क जलवायु अनुकूल होती है। जलवायु तथा जमीन की विभिन्नता के कारण अंजीर के फल आकार-प्रकार में भी उत्तम हो जाते हैं।

अंजीर की खेती तथा प्रसार

अंजीर की खेती तथा इसका प्रसार अधिकतर इसकी कलमों (cuttings) से किया जाता है। दो-तीन वर्ष पुराने पौधों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसात के प्रारम्भ में ८-१२ इंच लम्बी कलमें काट ली जाती हैं और उन्हें एक-एक फुट की दूरी पर पौधघर (nursery) में लगा देते हैं। एक वर्ष के बाद फिर इन्हें खेतों में २०-३० फुट की दूरी पर लगाते हैं। कभी-कभी बीजों से भी इसकी खेती की जाती है। अंजीर के ग्राफ्ट (graft) को पीपल, गूलर आदि के पेड़ों पर लगाने में भी सफलता मिली है, और इस प्रकार से उत्पन्न फल भी अच्छे होते हैं।

अंजीर के फल उसकी शाखाओं पर ही लगते हैं। शाखाओं की संख्या बढ़ाने तथा पेड़ को मनोवांच्छित आकार देने के लिए प्रुनिंग (prunning) भी करनी पड़ती है। वर्ष में दो बार फल लगते हैं, अतः प्रुनिंग का समय स्थानिक सुविधाओं के अनुसार निश्चित करना पड़ता है, जैसे पूना में जुलाई में और उत्तरप्रदेश में दिसम्बर में प्रुनिंग लाभदायक होती है। अच्छे फल के लिए कैप्रिफिकेशन की कृत्रिम क्रिया भी करते हैं। इस विधि में बांस की पतली सींकों को पहले जंगली गूलर या कैप्रि फिग के फूलों के छिद्रों में डालकर फिर उन सींकों को अंजीर के फूलों में डालते हैं। इस प्रकार परसेचन होकर अच्छे फल लगते हैं।

पौध लगाने के दो-तीन वर्ष बाद फल लगने प्रारम्भ हो जाते हैं। पेड़ १२-१५ वर्ष तक अच्छे फल देते हैं। वर्ष में दो फसलों के अतिरिक्त कभी-कभी तीसरी भी देखी गयी है। एक पेड़ से लगभग ६००-६५० फल प्रति-वर्ष निकलते हैं। पके फल जब पेड़ से अधिकांश सूखकर गिर जाते हैं, तो उन्हें एकत्रकर चौड़े बरतनों में अच्छी तरह सुखाते हैं, अथवा पके फलों को २०-३० मिनट तक गन्धक का धुआं (sulphur fumes) देकर फिर लकड़ी के बरतनों में ५-७ दिन तक धूप में सुखाते हैं। बिलकुल शुष्क होने के पूर्व उन्हें दबाकर चपटा कर लिया जाता है जिससे पैकिंग में आसानी होती है। पैकिंग के पूर्व फलों को ३% नमक के घोल में डुबाते हैं जिससे वे मुलायम तथा स्वादिष्ट हो जाते हैं। इन फलों को कभी-कभी माला की तरह गूंथकर बाजार में विक्रय हेतु भेजते हैं। कोल्ड स्टोरेज में रखे हुए तथा जमाये हुए अंजीर (frozen fig) जल्दी विकृत हो जाते है, अतः ये विधियां अधिक प्रचलित नहीं हैं।

हानिकारक कीड़े तथा रोग

अंजीर में विशिष्ट प्रकार के कीड़े तथा रोग भी लग जाते हैं जिससे फसल को काफी हानि पहुंचती है। एक विशेष कीड़े के कारण इसके पत्तों का निचला भाग मुरचई (rusty) रंग का हो जाता है। इससे पत्ते गिरने लगते हैं तथा फल कम लगते हैं। इससे बचने के लिए गन्धक के बोर्डे मिश्रण (Bordeaux mixture) का छिड़काव करना चाहिये। कुछ कीड़े अंजीर के तनों में छेद बना देते हैं और पेड़ को कई प्रकार से क्षति पहुंचाते हैं। ये कीड़े मिट्टी के तेल से मरते हैं। कुछ कीड़े

अंजीर के फल माला की तरह गूंथकर बाजार में विक्रय के लिए भेजे जाते हैं

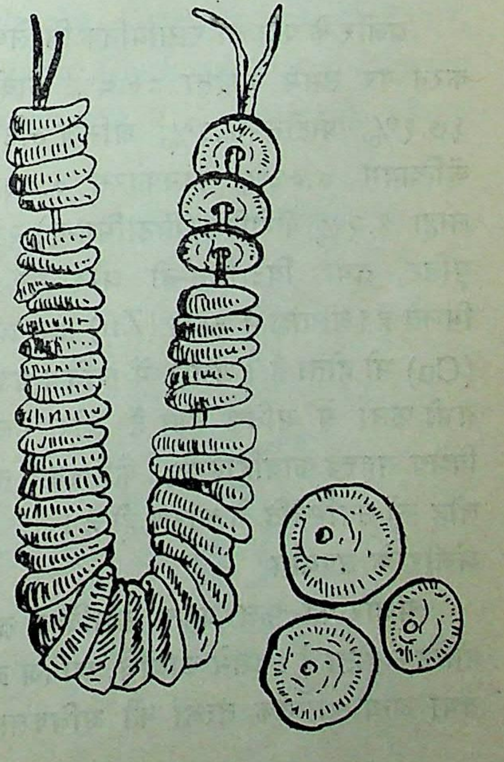

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

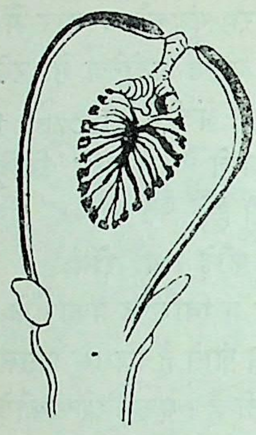

अनुदैर्घ्य काट में अंजीर—अंडपी पुष्प देखे जा सकते हैं

फलों में लगते हैं जिससे फल खट्टे हो जाते हैं या सड़ जाते हैं। ज्यादा पानी से भी फल विकृत हो जाते हैं। इसलिए अच्छे फल की प्रगति के लिए अंजीर के पेड़ों को कीड़े-मकोड़े तथा अन्य हानिकारक पदार्थों से बचाना चाहिये।

रासायनिक विश्लेषण

अंजीर के फल का रासायनिक विश्लेषण करने पर उसमें आर्द्रता ८०.८%, कार्बोज १७.१%, प्रोटीन १.३%, खनिज ०.६%, कैल्शियम ०.०६%, फासफोरस ०.०३%, लोहा १.२%, कैरोटिन (विटामिन-ए) २५० यूनिट, तथा विटामिन-बी और सी भी मिलते हैं। अल्पांश में जस्ता (Zn) तथा ताम्र (Cu) भी होता है। अंजीर में खनिज पदार्थ सभी फलों से अधिक होते हैं और इसका विशेष महत्त्व कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम तथा लौह की उपस्थिति के कारण ही है।

अंजीर के उपयोग

अंजीर का फल बहुत स्वादिष्ट तथा पौष्टिक होता है। इसमें कार्बोज, खनिज द्रव्य तथा अन्य पौष्टिक तत्त्वों की अधिकता के कारण ही इसे सभी फलों से उत्तम माना जाता है। इसके सूखे तथा ताजे, दोनों प्रकार के फलों का उपयोग होता है। फलों से शराब (alcohol and wine) भी तैयार की जाती है। यूरोपीय देशों में काफी (fig coffee), अचार (pickle or spiced fig), रोटी (fig bread), मांस (fig meat) तथा ब्राउनीज (fig brownies) के रूप में इसका प्रयोग प्रचलित है।

चिकित्सा में भी इसके फलों का प्रयोग बहुलता से किया जाता है। ये हलके दस्तावर (laxative) तथा स्निग्धकारक (demulscent) होते हैं। अतः ऐसे रोगों में जब आंतों में रुक्षता बढ़ जाती है और कब्जियत हो जाती है, इसका प्रयोग किया जाता है। शर्बत अंजीर (syrup fig) नामक दवा मिलती है, जिसका प्रयोग कब्जियत में करते हैं। इसमें थोड़ी मात्रा में सनाय (senna) भी मिली होती है। इसका प्रयोग बवासीर, यकृद्वृद्धि, कामला तथा बच्चों के जिगर के रोगों में भी लाभदायक होता है।

अनुदैर्घ्य काट में कंपरी अंजीर—पुंकेसरी और अंडपी पुष्प देखे जा सकते हैं

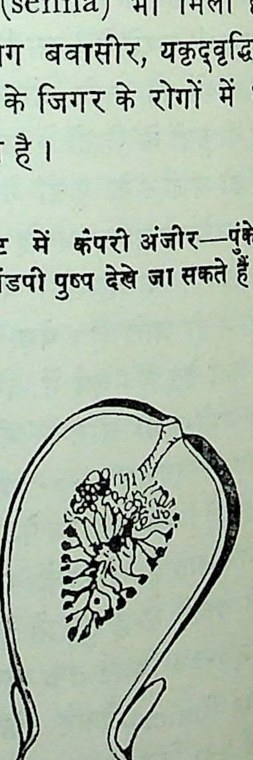

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डपी पुष्प (विवर्धित)

अंजीर की छाल तथा कच्चे फलों से एक प्रकार का गाढ़ा दूध (latex) निकलता है जो दूध को जमा देता है। इस गाढ़े दूध से रिनेट (rennet) तैय्यार किया जाता है जो सामान्य रिम्नेट से ३०–१०० गुना अधिक शक्तिशाली होता है। इसका प्रयोग दूध जमाने, पनीर बनाने, कुछ व्यावसायिक क्रियाओं में तथा ओषधि के रूप में किया जाता है। अन्य कृमियों पर इसका घातक प्रभाव होता है। इसका कार्य इसमें रहने वाले फिसिन (ficin) नामक एक किण्व (enzyne) के कारण होता है, जो विशेषकर आंतों में रहने वाले केंचुओं (Ascaris) को मारता है। इसका प्रयोग सोडा बाईकार्ब (soda bicarb) के साथ मिलाकर मुख द्वारा करना चाहिये, अन्यथा यह आमाशय के अम्ल से नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह मांस को मुलायम बनाने के काम भी आता है। अंजीर की पत्तियों का प्रयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जाता है।

खांसी का शत्रु-अड़ूसा

अड़ूसा के बारे में एक उक्ति प्रचलित है कि जब तक इसके पौधे पृथ्वी पर विद्यमान हैं, तब तक खांसी, क्षय और रक्तपित्त के रोगियों को हताश होने की आवश्यकता नहीं है। तात्पर्य यह है कि अड़ूसा इन रोगों की अचूक ओषधि है। यह एक लोकोक्ति ही नहीं, बल्कि प्राचीन चिकित्सा-शास्त्रियों के अनवरत अनुभव पर आधारित सत्य कथन है। आज भी इसके प्रयोग से अनेक रोगों में आशातीत सफलता मिल रही है।

अड़ूसा हमारे देश के मैदानी भागों में होने वाला ओषधिगुणयुक्त सर्वसुलभ पौधा है। इसे संस्कृत में वासा, वासक, आठरूपक, तथा वृष कहते हैं। देहातों में इसे अड़ूसा, अरुस, वांसा या बसौंटा कहते हैं। यह एकेंथेसी (*Acanthaceae*) कुल की वनस्पति है और इसका लैटिन नाम एधाटोडा वासिका (*Adhatoda Vasica*) है। पुष्पों के वर्णानुसार इसके दो भेद मिलते हैं—(१) श्वेत पुष्प—इसके पुष्प सफेद रंग के होते हैं। यही जाति अधिकतर उपलब्ध होती है, और (२) कृष्ण पुष्प (या ताम्र पुष्प)–इसे असितवर्ण या कृष्णवासक भी कहते हैं। यह जाति विशेषकर हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में ४,००० फुट की ऊंचाई पर बहुलता से प्राप्त होती है। इसके पौधे ६-१४ फुट ऊंचे होते हैं। पत्ते गहरे रंग (dark colour) के तथा पुष्प ताम्रवर्ण होते हैं। शाखाओं की ग्रन्थियां

पुंकेसरी पुष्प (विवर्धित)

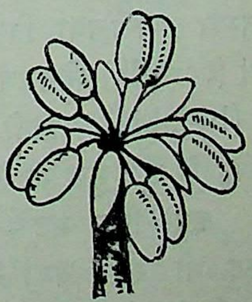

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

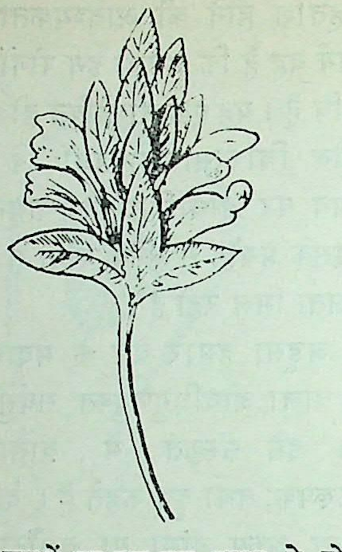

अडूसे की शाखाओं पर एक-एक स्थान से दो पत्र निकलते हैं

रक्ताभ होती हैं। ओषधि की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी है।

परिचय

अडूसे(श्वेतपुष्प) के क्षुप ४–८ फुट तक ऊंचे होते हैं और सदाहरित (evergreen) रहते हैं। पत्ते ५–६ इंच लम्बे, १ $\frac{१}{२}$ इंच चौड़े, भालाकार तथा तीक्ष्णाग्र होते हैं। शाखाओं पर एक-एक स्थान से दो पत्र निकलते हैं जो दोनों तरफ फैले होते हैं।

मध्यशिरा स्पष्ट दीखती है। पत्रवृन्त १ – १ $\frac{१}{२}$ इंच लम्बे होते हैं। शाखाओं के शीर्षभागपर या पत्र-सन्धि से पुष्पमञ्जरियां निकलती है जो २–४ इंच लम्बी, सघन तथा डण्ठलहीन पुष्पों से सुशोभित रहती हैं। पुष्प श्वेतवर्ण के जिनका वाह्यदल (calyx) $\frac{१}{३}$–$\frac{१}{२}$ इंच लम्बा तथा पंचधा विभक्त होता है। पंखुड़ियां (corolla) श्वेतवर्ण की तथा द्वि-ओष्ठीय (bi-labiate) होती हैं जिससे देखने पर सिंह के खुले मुख की तरह प्रतीत होती हैं। इसी लिए अडूसे का एक नाम सिंहास्य भी रखा गया है। निचले ओष्ठ पर बैंगनीं रंग की दो तिरछी धारियां होती हैं। पंखुड़ी के भीतरी भाग पर रक्ताभ लोहितवर्ण के धब्बे होते हैं। पुंकेसर दो होते हैं। फल (capsule) $\frac{२}{३}$ इंच लम्बा, मुद्गराकार, लम्बाई में धारयुक्त (channelled) होता है। प्रत्येक फल में चार बीज होते हैं। शरदृऋतु में पुष्प लगने लगते हैं।

उत्पत्ति-स्थल

अडूसे के क्षुप प्राय: स्वयंजात अर्थात् अपने से पैदा होते रहते हैं। हमारे देश के मैदानी भागों में सर्वत्र तथा ४,००० फुट की ऊंचाई तक पर्वतीय प्रदेशों में उपलब्ध होते हैं। कृष्णजाति तो अधिकतर पहाड़ी स्थानों पर ही उत्पन्न होती है। अडूसा कड़ी, कंकड़ीली, तथा पथरीली भूमि में समूहबद्ध उत्पन्न होता है। प्राय: रेल लाइनों तथा सड़कों के किनारे पुराने जीर्ण-शीर्ण खण्डहरों में इसके क्षुप बहुलता से मिलते हैं। भारतवर्ष के अतिरिक्त दक्षिणी-पूर्वी एशिया में, विशेषकर बर्मा, सिंगापुर में भी इसके पौधे प्राप्त होते हैं।

रासायनिक विश्लेषण

अडूसे की उपयोगिता को देखते हुए इसके कार्यकारी तत्त्व को पता लगाने के बहुत प्रयत्न वैज्ञानिकों द्वारा किये गये। १८८८ में हूपर ने यह बतलाया कि अडूसे में मुख्यत: दो प्रकार के तत्त्व हैं—एक उड़नशील तैल सदृश गन्धयुक्त पदार्थ तथा दूसरा एल्कलाइड जिसका नाम वासिसिन (vacicine) रखा गया। अन्य वैज्ञानिकों ने भी इन तत्त्वों की उपस्थिति बतलायी। वासिसिन एक रवेदार एल्कलाइड (crystalline alkaloid) है। इसका रासायनिक सूत्र $C_{11}H_{12}N_2O$ है। इसका स्वाद अलग होता है। १९५४ में डा. चोपड़ा तथा डा. गुप्ता ने अडूसे के पत्र, पुष्प तथा मूल में एक पीताभ वर्ण का ०.०७५% उड़नशील तैल (essential oil) पाया। पत्तों में एधाटोडिक अम्ल भी मिलता है। इसके अतिरिक्त इसमें वसा, राल, लुआवदार पदार्थ, शर्करा, पीतरंजक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अल्पांश में मिलते हैं।

अड़ूसे को खांसी का शत्रु कहा जाता है। वास्तव में इसके प्रयोग करने से कफ पतला होकर आसानी से निकलने लगता है, और श्वासनलिकाओं का संकोच (spasm) दूर होता है। यह कार्य इसके एल्कलाइड वासिसिन के कारण होता है। इन गुणों के कारण इसका प्रयोग पुरानी खांसी, दमा या श्वासरोग तथा क्षय की सूखी खांसी में बहुत लाभदायक होता है। इन रोगों में इसका ताजा रस, एक्सट्रैक्ट, सिरप या टिंक्चर देते हैं। दमा के दौरों को रोकने के लिए इसकी सूखी पत्तियों का धूम्र-पान के रूप में व्यवहार करते हैं।

डा. चोपड़ा तथा उनके सहयोगियों ने परीक्षणों से यह सिद्ध किया है कि अड़ूसे में पाया जाने वाला उड़नशील तैल क्षयरोग के कीटाणुओं की वर्धनशीलता रोकता है, और क्षय के रोगी को इसके प्रयोग से लाभ हो सकता है। यद्यपि आजकल क्षयरोधक अन्य प्रभावशाली ओषधियां उपलब्घ हैं, परन्तु इस देशीय ओषधि का भी प्रयोगात्मक परीक्षण होना चाहिये, और हो सकता है यह अधिक उपयोगी सिद्ध हो।

तिक्त तथा कषाय होने से अड़ूसा स्तम्भक (astringent) भी होता है, इस लिए मल के वेग तथा रक्तस्राव को रोकता है, और अतिसार, प्रवाहिका या आंव पड़ने पर इसका सफल प्रयोग होता है। यह उन अवस्थाओं में अधिक हितकर है जब मल के साथ रक्तस्राव भी होता हो, जैसे रक्तातिसार, रक्तमिश्रित आंव गिरना, खूनी बवासीर, रक्तापत्त, रक्तप्रदर तथा रक्तष्ठीवन आदि। वाह्य रक्तस्राव को भी यह रोकता है, तथा, कृमिघ्न होने से त्वचा के रोग और शूलयुक्त स्थानों पर इसका लेप किया जाता है।

अड़ूसायुक्त ओषधियां

अड़ूसा के ताजे पत्रों का रस निकालकर प्रायः प्रयोग किया जाता है। पत्तों को थोड़ा गरम करने से आसानी से रस निकल जाता है। पत्तों के अलावा पुष्प तथा मूल की छाल का अधिकतर प्रयोग होता है। अड़ूसे से बनी हुई बहुत-सी दवाएं बाजार में मिलती हैं। ●

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए
हमारे उपयोगी प्रकाशन

१.	**जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
२.	**वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : ३·००
३.	**प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल	मूल्य : ३·५०
४.	**प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
५.	**प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी	मूल्य : २·००
६.	**सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल	मूल्य : ६·२५
७.	**सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी (हायर सेकण्डरी की कक्षा ९ और १० के लिए)	मूल्य : ५·००

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

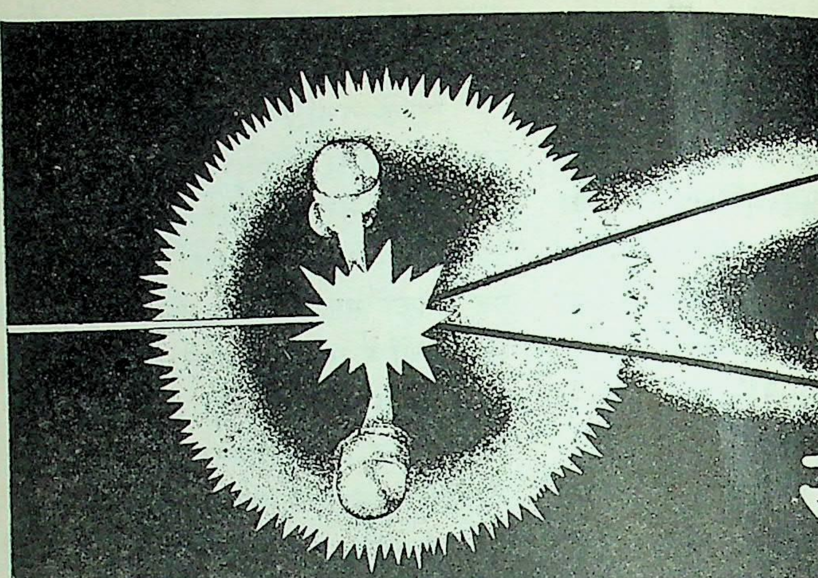

ऊर्जा के विविध स्वरूप

श्यामकुमार तिवारी

प्रकृति के चमत्कारों एवं प्रतिक्षण होने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं ने सदैव मानव का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। सदियों पूर्व जब मानव ने सभ्यता की ओर कदम बढ़ाये, उसने अपने चतुर्दिक होने वाले परिवर्तनों और प्रक्रियाओं का अध्ययन प्रारम्भ किया। आदिम युग में जब मानव जंगली था, वह आधुनिक सभ्यता से कोसों दूर था। फिर भी अनेक तथ्यों से परिचित था, भले ही उनके वैज्ञानिक रहस्य से वह अनभिज्ञ था। उसे यह ज्ञात था कि यदि किसी वस्तु को लक्ष्य करके पत्थर का टुकड़ा फेंके, तो वह लक्ष्य से टकराकर उसे क्षति पहुंचा सकता है। धीरे-धीरे इसी ज्ञान का उपयोग उसने शस्त्र-निर्माण में किया। आज भी अफ्रीका के वन प्रदेशों के आदिवासी एवं अनेक आदिम जातियों के लोग बिना इस रहस्य को जाने अपना जीवनयापन कर रहे हैं।

किन्तु ज्यों-ज्यों विज्ञान का प्रसार हुआ, मानव ने अनेक प्रश्नों पर विचार किया। जब मानव ने ताक़त लगाकर फेंके गये हथियार से अपना शिकार किया होगा, तो उसके जिज्ञासु मस्तिष्क में यह प्रश्न अवश्य उठा होगा कि आखिर उस पत्थर में इतनी शक्ति आयी कहां से ? सर्वप्रथम जब न्यूटन ने गति के सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, तब 'बल' का विचार वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में आया। इसी समय मानव का परिचय 'संवेग' से हुआ। न्यूटन के अनुसार संवेग परिवर्तन की दर आरोपित बल के समानुपाती होती है। उन्नीसवीं सदी के मध्य प्रयोगों के द्वारा यह स्पष्ट हो गया कि किसी गतिशील पिण्ड का बल, उष्मा गति या विद्युत्-चुम्बकीय घटना के रूप में बदला जा सकता है। अतः यह गतिशील बल इस अर्थ में समझा जाने लगा कि यह विभिन्न भौतिक अवस्थाओं में समान रहता है।

ऊर्जा : गति के परिवर्तन को उत्पन्न करने वाला कारण

यंग ने बल की परिभाषा 'गति के परिवर्तन' से स्पष्ट की। सर्वप्रथम मेयर ने ऊर्जा के अविनाशत्व के सिद्धान्त का मात्रात्मक प्रमाण दिया, और हैमहाल्ज़ी ने इसका गणितीय वर्णन उपस्थित किया। फैराडे ने भी लिखा है : 'बल शब्द से मेरा तात्पर्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस कारण से है जो भौतिक गति उत्पन्न करता है।'

इस प्रकार भौतिक-शास्त्री उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में ऊर्जा को गति के परिवर्तन को उत्पन्न करने वाला कारण मानने लगे। ए. बी. स्टांले ने १८८२ में लिखा : 'ऊर्जा गति के कारण को व्यक्त करती है।'

संहति और ऊर्जा को भिन्न मानकर भौतिक-शास्त्रियों ने ऊर्जा को 'काम करने की क्षमता' के रूप में पाया, और इसलिए ऊर्जा का मापन सरल और सम्भव हो गया। मैक्सवेल ने बताया : 'कार्य को ऊर्जा का स्थानान्तरण समझा जा सकता है।' इस प्रकार ऊर्जा का विचार अधिक निखरे रूप में हमारे समक्ष आया।

मेयर तथा जूल के प्रयोगों ने उष्मा को भी ऊर्जा सिद्ध कर दिया। इसके साथ ही वैज्ञानिकों का ध्यान उर्जा के विविध स्वरूपों की ओर आकृष्ट हुआ। सीबेक तथा पेल्टियर के प्रयोगों ने यह दिखा दिया कि उष्मा और विद्युत् शक्ति का परस्पर रूप परिवर्तन हो सकता है। सादी कारनां ने अपने सिद्धान्त से सिद्ध कर दिया कि उष्मा को यान्त्रिक ऊर्जा में बदला जा सकता है। आंरस्टेड और आर. एल. वर्ल के प्रयोगों से चुम्बकीय ऊर्जा का विद्युत् ऊर्जा में परिवर्तन सिद्ध हो गया। इस प्रकार ऊर्जा परिवर्तन का सिद्धान्त पोषित हुआ।

उपरलिखित सभी विवेचनों से केवल यह आभास मिलता है कि किस प्रकार ऊर्जा का विचार विकसित हुआ। मुख्य प्रश्न है कि ऊर्जा वस्तुतः है क्या ? इस प्रश्न पर सर्वप्रथम फ्रेंच भौतिक-शास्त्री हेनरी पायनकेयर ने विचार किया किन्तु वह असफल रहा।

वस्तुतः उसकी असफलता का कारण यह था कि उस समय तक द्रव्य को पूर्णरूपेण निष्क्रिय माना जाता था। यंग के ऊर्जा शब्द के अर्थ को ध्यान में रखकर विलियम थामसन (बाद में लार्ड केलविन) ने थर्मोडाइनमिक्स के प्रथम नियम का प्रतिपादन किया। यहीं पर उसने स्थितिज और गतिज ऊर्जा का विचार भी व्यक्त किया।

स्थितिज ऊर्जा

केलविन के अनुसार स्थितिज ऊर्जा वस्तु की विशेष स्थिति के कारण होती है। इसका मापन काम के उस परिमाण से किया जाता है जो वह वस्तु अपनी स्थिति से किसी प्रामाणिक स्थितिमें जाने पर कर सकती है। यदि किसी वस्तु की मात्रा m है और धरातल से h ऊंचाई पर है, तो उसकी स्थितिज ऊर्जा m.g.h. होगी। घड़ी में चाबी लगाने से उसके फनल में खिंचे हुए स्प्रिंग में और उस पर रखे भार में स्थितिज ऊर्जा होती है। यही ऊर्जा घड़ी को गति देती है।

और गतिज ऊर्जा वह ऊर्जा है जो गति के कारण उत्पन्न होती है। यदि m संहति की गतिशील वस्तु का वेग v है तो उसकी गतिज ऊर्जा का माप $^1/_2\ mv^2$ होगा। यद्यपि मानव को इसकी वास्तविकता का ज्ञान काफी समय बाद हुआ, किन्तु इसके प्रयोग से सभी काफी समय से परिचित हैं। हालैण्ड की पवनचक्कियां वायु से ऊर्जा पाकर चलती हैं। झरनों और प्रपातों से चक्की और टरबाइनें चलायी जाती हैं। बन्दूक से जब गोली दागी जाती है, तो उसका वेग बहुत बढ़ जाता है, फलस्वरूप उसका संवेग (momentum) भी बहुत बढ़ जाता है। अतः लक्ष्य से टकराने पर जब लक्ष्य उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर देता है, तो ऊर्जा उसे आगे बढ़ने को प्रेरित करती है, और इस प्रकार वह लक्ष्यबेध देती है। अधिकतर सभी आग्नेय शस्त्र इसी सिद्धान्त पर बने हैं।

किन्तु अलबर्ट आइन्स्टीन के सापेक्षवाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सिद्धान्त ने पुराने सिद्धान्तों की सभी जड़ें हिला दीं। ऊर्जा के सम्बन्ध में मान्य सभी विचार एकदम बदल गये। वस्तुतः आइन्स्टीन परमाणु युग का प्रमुख वैज्ञानिक था। उसके सिद्धान्त से अनेक नये तथ्य जो प्रायोगिक रूप से भी सत्य हैं, सम्मुख आये।

आइन्स्टीन के अनुसार किसी भी संहति को ऊर्जा में बदला जा सकता है। इस प्रकार संहति का पूर्णतः अक्रिय समझा जाना गलत साबित हुआ। इस महान् वैज्ञानिक ने प्राचीन परम्परा को तोड़कर ऊर्जा का एक विशाल स्रोत और क्षेत्र हमारे लिए उपलब्ध किया, और परमाणु ऊर्जा का स्रोत वैज्ञानिकों के हाथ लगा।

यूं तो परमाणु युग का प्रारम्भ आइन्स्टीन से ही हुआ, किन्तु कुछ समय पूर्व वैक्यूरल ने रेडियोधर्मिता का पता लगाया था। वैक्यूरल ने यह भी देखा कि कुछ पदार्थ ऐसी किरणें निकालते हैं जिनसे फोटोग्राफी की प्लेट पर असर पड़ता, और जो पदार्थों को भेदकर बाहर निकल जाती हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि ये रश्मियां गैसों का आयनीकरण कर देती हैं। फलतः यह माना गया कि प्रकृति में कुछ ऐसे पदार्थ हैं जो अनवरत कुछ रश्मियां निकालते हैं और ये रश्मियां ऊर्जा का स्रोत भी हैं।

प्रकृति का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिकों को परमाणु के गूढ़ अध्ययन को आवश्यकता हुई। अतः वैज्ञानिकों ने परमाणु-रचना की ओर विशेष ध्यान दिया। प्रसिद्ध वैज्ञानिक नील बोहर ने परमाणु का विशेष अध्ययन किया और एक माडल तैयार किया जिसे 'बोहर का परमाणु माडल' कहते हैं। उसने बताया कि इलेक्ट्रान विभिन्न ऊर्जा-स्तरों पर अपनी कक्षा (orbit) में घूमते हैं, और ये कक्षाएं गोलाकार होती हैं। एक कक्षा में घूमने वाले इलेक्ट्रान लगभग एक-सी ऊर्जा वाले होते हैं। जब कभी इन ऊर्जा-स्तरों को

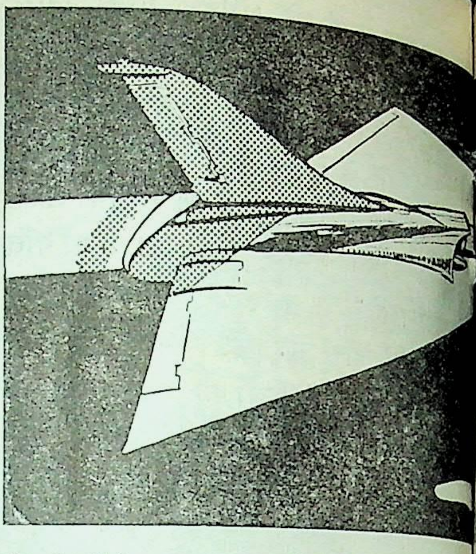

वैज्ञानिकों ने आशा व्यक्त की है कि वर्तमान शता[illegible] यानों में ऐसे यान ध्वनि [illegible]र से उड़ें

परिवर्तित करके ये इक्लेट्रान स्तर बदलते हैं, तो प्रकाश वर्णपट प्राप्त होता है। बाद में इस मत में परिवर्तन एवं संशोधन हुए क्योंकि इन अनुमानों से वर्णपट निर्माण को तो समझाया जा सकता है, किन्तु उत्तम वर्णपट (fine spectrum) के निर्माण का कारण नहीं समझाया जा सकता। (एक ही वर्णपट रेखा जब किसी चुम्बकीय या अन्य क्षेत्र में रखी जाती है, तो यह कई लाइनों में टूट जाती है। इस प्रकार बना वर्णपट उत्तम वर्णपट (fine spectrum) कहलाता है।) अतः कक्षा को दीर्घ वृताकार माना गया। एक कक्ष के इलेक्ट्रान को एक ही ऊर्जा स्तर पर माना जाना गलत कहा गया।

मूलभूत कणों की संख्या अधिक हो गयी

अरम्भिक मतों के अनुसार परमाणु के नाभिक का निर्माण प्रोटान और न्यूट्रान कणों से मिलकर हुआ है। इलैक्ट्रान अपनी परिधि में नाभिक के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन कणों को मूलभूत कण (elementary particles) कहा गया। बाद में अन्य कणों की खोज की गयी। इस प्रकार आधुनिक मतानुसार मूलभूत कणों की संख्या केवल तीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

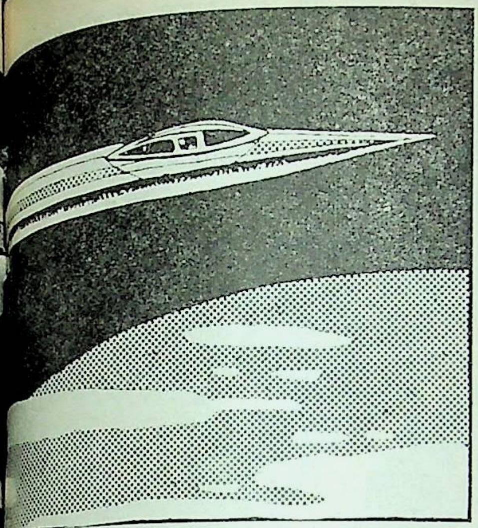

यानों में परमाणु ऊर्जा का उपयोग होने लगेगा
...र से उड़ेंगे

(प्रोटान, न्यूट्रान, इलैक्ट्रान) न होकर अधिक हो गयी है।

१९३९ में जरमन वैज्ञानिक आटो हान ने खोजा कि जब यूरेनियम-२३८ का तेज गति वाले न्यूट्रान कणों के साथ संघट्ट होता है तो बेरियम का एक आइसोटोप बनता है। इस नये आइसोटोप का परमाणु-भार यूरेनियम के परमाणु-भार का लगभग आधा है। इस प्रकार लगभग २०० M. E. V. ऊर्जा उत्पन्न हुई। यह क्रिया तत्कालीन ज्ञात क्रियाओं से सर्वथा भिन्न थी, क्योंकि इस क्रिया में यूरेनियम का परमाणु लगभग दो समान परमाणुओं में टूट गया था। इस क्रिया का नाम न्यूक्लियर फिसन (nuclear fission) दिया गया। प्रक्रिया को निम्नलिखित रासायनिक समीकरण से दर्शाया जाता है—

$$U^{238}_{92} + n^1_0 \rightarrow Ba^{148}_{56} + Kr^{88}_{36} + 3n^1_0$$

वस्तुतः यह यूरेनियम परमाणु और भी अनेक परमाणुओं में टूट सकता है। इसी सिद्धान्त पर परमाणु बम का निर्माण किया गया। परमाणु बम में एक परमाणु-भ्राष्ट बनायी जाती है जिसमें यूरेनियम-२३५ को ईंधन के रूप में काम में लाते हैं। इसमें कार्बन के ब्लाक बनाये जाते हैं और इन ब्लाकों में छेद कर दिये जाते हैं। इन छेदों में यूरेनियम-२३५ भर दिया जाता है, और इसे एल्यूमीनियम के डब्बों में सील कर दिया जाता है। इसे पाइल कहते हैं। इस का ताप बर्फ के प्रभाव से ठण्डा रखा जाता है। प्रक्रिया की नियन्त्रक छड़ों के रूप में कैडमियम (Cd) की छड़ें काम में लायी जाती हैं। कैडमियम का परमाणु न्यूट्रान का प्रमुख शोषक है, अतः इसके द्वारा प्रक्रिया का नियन्त्रण सम्भव है।

न्यूट्रान कण पोलोनियम से प्राप्त α कणों की बेरेलियम पर क्रिया से प्राप्त होते हैं। इन कणों की गति प्रारम्भ में बहुत तेज होती है। अतः इसको कम करने के लिए इन्हें मोम या कार्बन की तहों से गुजारते हैं। ये कण जब-जब U-२३५ से क्रिया करते हैं, तो पूर्व कथनानुसार फिसन (दो बराबर भागों में टूटने की क्रिया) सम्भव होती है और इससे और अधिक न्यूट्रान प्राप्त होते हैं। इन न्यूट्रान कणों की गति पुनः मोम से गुजारकर मन्द कर देते हैं। ये पुनः U-२३५ से क्रिया करते हैं। इस प्रकार अनवरत रूप से यह क्रिया चलती रहती है।

प्रयोगों से पता चला है कि यदि U-२३५ की संहति एक निश्चित मात्रा से कम होगी, तो फिसन की क्रिया नहीं होगी। अतः परमाणु बम में दो या अधिक U-२३५ के पिण्ड जिनकी मात्रा इस निश्चित मात्रा जिसे क्रान्तित संहति (critical mass) कहते हैं, कम होती है, लिये जाते हैं। यदि इन पिण्डों के बीच एक तीसरा या अन्य पिण्ड (जिसकी संहति भी क्रान्तित संहति से कम हो, किन्तु कुल पिण्डों का भार क्रान्तित मात्रा से अधिक हो) बैठा दिया जाय, तो इस प्रकार कुल पिण्डों का भार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्तित भार से अधिक हो जायगा और इस प्रकार फिसन क्रिया सम्भव हो सकेगी। यह क्रिया इतनी तीव्र होती है कि इस पर नियन्त्रण कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है। इससे विशाल ऊर्जा प्राप्त होती है। परमाणु बम का जहां विस्फोट कराना होता है वहीं पूर्वोक्त रीति से दोनों पिंडों के बीच सम्पर्क स्थापित हो जाता है।

सम्पर्क स्थापित कराते ही इस पर न्यूट्रान कणों की बौछार आरम्भ हो जाती है।

हिरोशिमा पर जो बम गिराया गया था उसमें U-२३५ और नागासाकी में प्लूटोनिनम-२३९ का प्रयोग किया गया था।

इसके विपरीत उद्जन बम (hydrogen-bomb) में U-२३५ प्रक्रिया के स्थान पर हलके परमाणुओं को 'फ्यूज' करके भारी परमाणु बनाते हैं। उद्जन परमाणु मिलकर हीलियम या दूसरे भारी परमाणु बनाते हैं, और इस क्रिया में ऊर्जा उत्पन्न होती है, उदाहरणार्थ—

$$H^2_1 + H^2_1 \rightarrow H^4_2 + 91 \times 10^9 \text{ cal}$$

$$H^2_1 + H^2_1 \rightarrow H_e{}^3_1 + n^1_0 + 10^9 \text{ cal}$$

सूर्य : ऊर्जा का स्रोत

सूर्य ऊर्जा की एक वृहद् मात्रा वायुमण्डल में प्रति क्षण देता रहता है। प्रकाश और उष्मा के रूप में अज्ञात समय से पृथ्वी और सौर-मण्डल के अन्य ग्रह इससे ऊर्जा प्राप्त करते रहे हैं। किन्तु परमाणु-प्रक्रियाओं के ज्ञान के पूर्व सौर ऊर्जा के रहस्य को समझना या इस प्रश्न का उत्तर कि प्रतिक्षण ऊर्जा का विकिरण करने वाला सूर्य ठण्डा क्यों नहीं होता, जटिल ही नहीं असम्भव भी था।

बेथ ने १९३८ में सर्वप्रथम सौर-ऊर्जा के प्रश्न पर विचार किया। उसने यह पता लगाया कि सूयमण्डल का ताप लगभग २० × १०⁶ ° सें. है। इस ताप पर वहां पाये जाने वाले सभी परमाणु अपने अतिरिक्त इलेक्ट्रानों (extra nuclear electrons) को निकाल देंगे। बेथ ने कल्पना की कि निम्नलिखित प्रक्रिया सूर्य में होती है—

$$H^1_1 + C^{12}_6 \longrightarrow N^{13}_7 + r \text{ rays(गा.कि.)}$$

$$C^{13}_6 + 1e^\circ + r \text{ rays} \leftarrow$$

$$H^1_1 + C^{13}_6 \rightarrow N^{14}_7 + r \text{ rays}$$

$$H^1_1 + N^{14}_7 \rightarrow O^{15}_8 + r \text{ rays}$$

$$\downarrow$$

$$_7N^{15} + 1e^\circ + r \text{ rays...}$$

इन गामा किरणों से प्राप्त ऊर्जा ह्रस्व वर्णपट, अल्ट्रा-वायलेट और इन्फ्रा लाल किरणों तथा उष्मा के रूप में हम तक आती है। सूर्य से हम ३·८ × १०³³ अर्ग ऊर्जा प्रति सेकेण्ड प्राप्त करते हैं।

ब्रह्माण्ड किरणें

सूर्य के अतिरिक्त ऊर्जा का अन्य स्रोत ब्रह्माण्ड किरणें हैं। इनकी खोज प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व हुई थी। १९०० में सी. टी. आर. विलसन ने कैम्ब्रिज में और एच. गाइटलड ने जरमनी में पृथक-पृथक अपने इलेक्ट्रोस्कोपों में एक आश्चर्यजनक घटना देखी। उनका निरीक्षण था कि पूर्णरूपेण पृथग्नस्थ होने पर भी यन्त्र में ऊर्जा का निरन्तर ह्रास हो रहा था। आरम्भ में इसे पृथ्वी के रेडियोधर्मी पदार्थ से निकली रेडियोसक्रिय किरणों के कारण माना गया। इसकी व्याख्या इस प्रकार की गयी कि ये किरणें विद्युत्दर्शी के अन्दर आयनीकरण कर देती हैं, फलतः विद्युतावेश कम हो जाता है।

१९१० में इस प्रकार के प्रयोगों को पृथ्वी के ऊपर और विभिन्न ऊंचाइयों पर किया गया, तो देखा गया कि ऐसा ह्रास बढ़ने लगा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य ऊर्जा की अकल्पनीय मात्रा वायुमण्डल में प्रति क्षण बिखेरता रहता है। प्रकाश और ऊष्मा के रूप में अज्ञात समय से पृथ्वी और सौरमण्डल के अन्य ग्रह इससे ऊर्जा प्राप्त करते रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि यह आयनीकरण पूर्वकथनानुसार पृथ्वी की रेडियोसक्रिय किरणों के कारण होता, तो इसकी दर ऊंचाई बढ़ने पर कम हो जानी चाहिये थी। तब यह निष्कर्ष निकाला गया कि यह आयनीकरण पृथ्वी की गामा किरणों से नहीं, अपितु वायुमण्डल से आने वाली किरणों से हुआ। ब्रह्माण्ड से आने के कारण इन्हें ब्रह्माण्ड किरणें (cosmic rays) कहा गया। वैज्ञानिकों की धारणा थी कि ये किरणें सूर्य से आती हैं, किन्तु रात में प्रयोग करने पर भी इस प्रकार की किरणों की उपस्थिति का ज्ञान हुआ, अत: पूर्णरूपेण यह सिद्ध हो गया कि दूर अन्तरिक्ष से इस प्रकार की किरणें आती हैं।

अति ऊर्जायुक्त अन्तरिक्ष किरणें

अन्तरिक्ष किरणें ऊर्जा का प्रमुख स्रोत हैं। ये ऊंचे वायुमण्डल को चीरकर समुद्र में भी लगभग १,००० मीटर तक पहुंचती हैं। इससे इस बात का पता चलता है कि इनका शोषण एक्स रश्मियों या गामा रश्मियों की अपेक्षा बहुत कम होता है। इसका कारण इनका अति ऊर्जायुक्त होना है। गणना द्वारा पता चला है कि सम्पूर्ण वायुमण्डल को पार करने में जितना शोषण इनका होता है, पानी की १०.३ मीटर मोटी तह उतना शोषण कर सकती है। लेड की २० सें. मी. मोटी चादर को पार करने में लगभग ५० प्रतिशत ब्रह्माण्ड किरणों का शोषण हो जाता है।

प्रश्न उठता है कि ब्रह्माण्ड किरणें आयीं कहां से? मिलीकन ने बताया कि ब्रह्माण्ड किरणें आइन्स्टीन के सिद्धान्त के अनुसार मात्रा के ऊर्जा में परिवर्तन से प्राप्त होती हैं। ब्रह्माण्ड किरणें दो प्रकार की होती हैं—(१) मृदु भाग—इसका शोषण लेड की १० से. मी. तह द्वारा होता है। और (२) कठोर भाग—यह १०० सें. मी. लेड की तह भी पार कर जाती है।

न इलेक्ट्रान, न प्रोटान

कठोर ब्रह्माण्ड किरणों का पथ जब बादल कक्ष (cloud chamber) में देखते हैं, तो इसका पथ इलेक्ट्रान की भांति दिखायी देता है, किन्तु चुम्बकीय क्षेत्र में इनका झुकाव तथा आयनीकरण घनत्व (ionization density) इस बात को सिद्ध करते हैं कि ये न तो इलेक्ट्रान हैं और न प्रोटान। इनके कण का भार १०० तथा ३०० m. c. के बीच आया। इन कणों का नाम मेसान (Meson) रखा गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ऊर्जा का विशाल स्रोत हमारे सम्मुख है। ऊर्जा के विभिन्न स्वरूप आज मानव को निर्माण की उस अनजानी दिशा की ओर मोड़ रहे हैं जहां से नव निर्माण के भास्कर का आलोक प्रस्फुटित हो रहा है। ●

भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन

अन्तरिक्ष किरणें सूक्ष्म कणोंद्वारा निर्मित होती हैं। ये कण इतने सूक्ष्म होते हैं कि आंख तो क्या, संसार के श्रेष्ठतम सूक्ष्मदर्शी द्वारा भी नहीं देखे जा सकते। इनके अध्ययन से नाभिकों की संरचना तथा अन्तरिक्ष-विज्ञान के सम्बन्ध में अनेक उपयोगी तथ्यों की जानकारी प्राप्त हुई है।

भारत में अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन १९२६ में उस समय प्रारम्भ हुआ था जब अमरीका के प्रसिद्ध भौतिक-शास्त्री प्रो. आर्थर एच. काम्पटन ने कश्मीर की पीर पंजाल श्रेणी में अध्ययन प्रारम्भ किया था। किन्तु भारतीय वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष किरणों का अध्ययन प्रायः एक दशाब्दी बाद प्रारम्भ किया। भारतीय वैज्ञानिक अब इनके अध्ययन द्वारा परमाणुनाभिकों में इनके घुसने की क्षमता का अनुमान लगा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

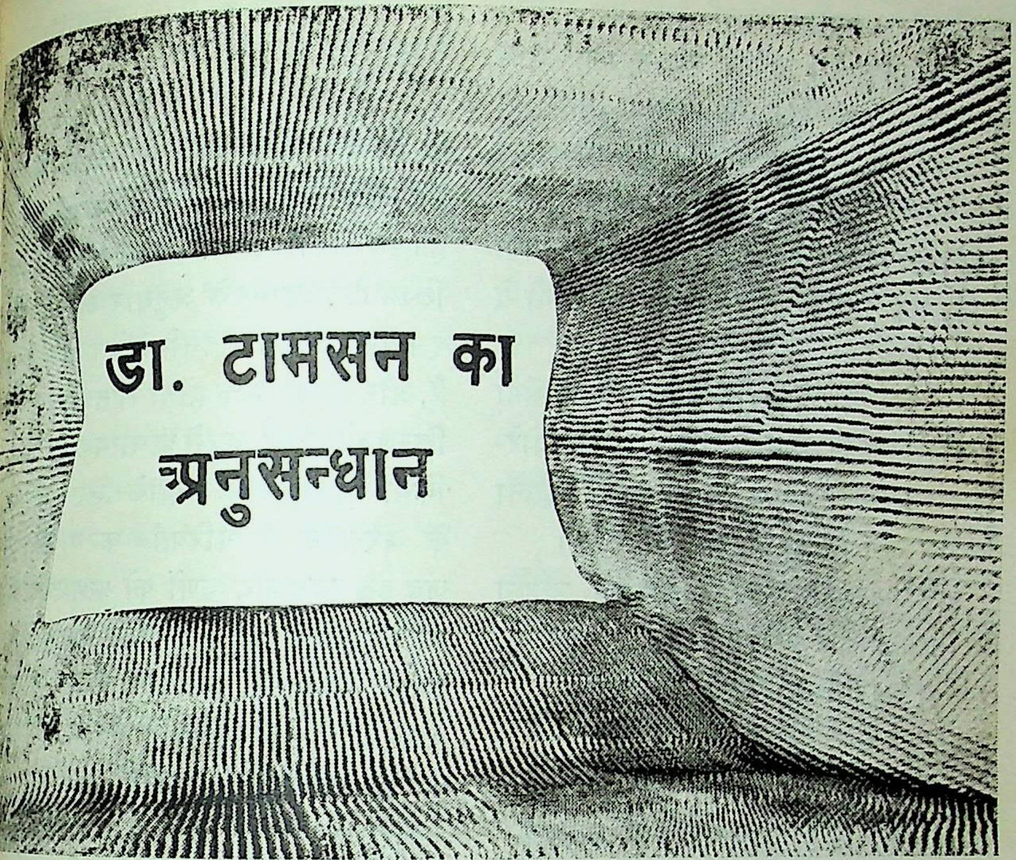

डा. टामसन का अनुसन्धान

जी. नदकर्णी

शाम लगभग बीत चुकी थी। इकबाल मुझे लेकर वेंगर्स पहुंचा। हम जल्दी-जल्दी सीढ़ियां चढ़ गये। प्रेस लाउंज में संवाददाता आ चुके थे और चाय पी रहे थे। अभी कान्फ्रेंस नहीं शुरू हुई थी। हम अपने दोस्तों के साथ जा बैठे। कई नये चेहरों से हमने परिचय किया। हमने चाय पी। इसी बीच डा. टामसन हाथ में बैग लिये हुए बहुत तेजी से आये। उन्होंने हैट उतारकर हम सबका अभिवादन किया और अपनी कुर्सी पर बैठ गये। उनके थोड़ा ही पीछे दो-तीन फाइलें लिये हुए उनका सहायक आया। वह डा. टामसन के नजदीक एक कुरसी पर बैठ गया और अपनी फाइलें टेबल के उस मेज पर रख दीं जिस पर डा. टामसन ने अपना बैग रखा था। कुछ देर के बाद उठकर वह बोला, "दोस्तो, मैं जरूरी नहीं समझता कि लिबर्टी पुरस्कार विजेता डा. टामसन का विस्तृत परिचय आपको दूं। आप एक अंगरेज डाक्टर हैं। ह्यूमन बाडी के जीवित कोष में मेटाबालिज्म और प्रोटोप्लाज्म को कंट्रोल करने के लिए आपने एक विधि का आविष्कार किया है। आपकी सहायता से डा. टामसन अपने विचार, कि जीवन और मृत्यु दो आम दृश्य हैं और इन पर कण्ट्रोल रखा जा सकता है, अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाना चाहते हैं।

"डा. टामसन का अनुसन्धान रोचक और साधारण व्यक्ति की समझ में आ जाने लायक है, फिर भी इसका थ्योरेटिकल आस्पेक्ट बहुत उलझा हुआ है। व्यक्ति एक विद्युत् आवेशयुक्त कक्ष में रखा जाता है, जहां हाई फ्रिक्वेंसी की इलेक्ट्रो-मैगनेटिक वेव्ज बहती हैं। व्यक्ति का शरीर भी विद्युत् आवेश-युक्त किया जाता है। वह अपने शरीर में एक असाधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तबदीली महसूस करता है। यह प्रयोग कंट्रोल्ड होता है। कृत्रिम रूप से व्यक्ति के शरीर में मेटाबालिज्म की रफ्तार बढ़ायी जा सकती है, या प्रोटोप्लाज्म में परिवर्तन लाकर पूर्व की मेटाबालिक क्रियाओं का प्रभाव कम किया जा सकता है। इस तरह व्यक्ति अपनी वास्तविक उम्र से अधिक या कम दिखायी दे सकता है।

"अब मैं डाक्टर टामसन से प्रार्थना करूंगा कि वे अपने आविष्कार का थ्योरेटिकल आस्पेक्ट आपके सामने रखें।" इतना कहकर टामसन का सहायक बैठ गया।

डा. टामसन उठे। सबसे पहले उन्होंने बाइबिल से कोट किया :

टु एवरी थिंग देयर इज ए सीजन,
एण्ड ए टाइम टु एवरी परपज
अण्डर द हैवेन...
(हर चीज के लिए एक समय होता है,
और प्रकृति में हर उद्देश्य के लिए एक
समय...)

डा. टामसन थोड़ी देर तक खामोश रहे। उनके चेहरे पर सिकुड़नें उभर आयीं। वे बड़ी गम्भीरता से नीचे देख रहे थे। दो-तीन मिनट तक चुप रहने के बाद उन्होंने कहा, "मैं हवाई जहाज से ब्रुसेल्स से हिन्दुस्तान लौट रहा था। मेरे साथ एक हिन्दुस्तानी वैज्ञानिक भी बम्बई आ रहे थे। मेरे प्रयोगों के बारे में उन्होंने किसी अमरीकी पत्रिका में पढ़ा था। मुझसे कहने लगे, 'डा. टामसन, आपके प्रयोगों के सम्बन्ध में पढ़कर नैथेनियल हाथर्न की एक कहानी की याद आ गयी।' मैंने उन्हें बताया कि मेरा प्रयोग दूसरा है। मैंने कोई पीने की दवा नहीं ईजाद की है, और मैं आदमी को जवान भी बना सकता हूं, बूढ़ा भी।

"मैंने एक उलझी हुई थ्योरी दुनिया के सामने रखी है। बहुत से वैज्ञानिक मेरी थ्योरी से सहमत नहीं हैं, लेकिन मैं जानता हूं, हर नयी चीज को पहले मुखालफत के दौर से गुजरना पड़ता है।

"मैंने यह माना है कि प्रोटोप्लाज्म पर ही जिन्दगी और मौत का सवाल टिका है। प्रोटोप्लाज्म मैगनेटिक पार्टिकिल्ज द्वारा बना है। इन मैगनेटिक पार्टिकिल्ज के दो ध्रुव मैगनेटिज्म के सिद्धान्त के अनुसार अरेंज्ड होते हैं। इस तरह लगातार इनसे शक्ति मिलती रहती है, और इनका डिके होता रहता है। इन पार्टिकिल्ज को कृत्रिम रूप से ऋणात्मक या धनात्मक किया जा सकता है। इसके लिए इनके ध्रुवों के अरेंजमेंट में परिवर्तन करना पड़ता है। जब इन चुम्बकीय कणों को ऋणात्मक किया जाता है तो ये बाहर से शक्ति चाहते हैं। यदि बाहरी शक्ति जो इलेक्ट्रिक चार्जेज के रूप में होती है, इन्हें दी जाय, तो निश्चत मात्रा पर व्यक्ति की उम्र के निश्चित वर्ष कम होते जायेंगे। जब मैगनेटिक पार्टिकिल्ज धनात्मक किये जाते हैं, तो इनसे शक्ति निकलती है। शक्ति की जितनी भी मात्रा निकलती जायगी, उसी अनुपात में आदमी बूढ़ा होता जायगा। मेरा प्रयोग इसी सिद्धान्त पर आधारित है।" इतना कहकर डा. टामसन बैठ गये और हमसे प्रश्न पूछने के लिए कहा।

कई संवाददाताओं ने प्रश्न पूछे।

"क्या आपका यह मत है कि मृत्यु को नियन्त्रित किया जा सकता है?"

"यह सही है, लेकिन एक सीमा तक। प्रोटोप्लाज्म के मैगनेटिक पार्टिकिल्ज, एक समय ऐसा आयेगा जब उदासीन होकर टूट जायेंगे, लेकिन जब तक वे ऐक्टिव हैं, मृत्यु को कंट्रोल में रखा जा सकता है।"

"क्या यह सम्भव है कि दुनिया के सब लोगों की उम्र में से दस-दस वर्ष कम हो जाय?"

"यह सम्भव है, लेकिन मृत्यु के नजदीक पहुंचकर उम्र कम कराना ठीक रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं नहीं समझता कि पांच वर्ष के बच्चे की उम्र इस प्रकार दस वर्ष कम की जा सकती है।"

डा. टामसन की इस बात पर काफी देर तक संवाददाता हंसते रहे। फिर प्रश्नों की झड़ी लग गयी :

"क्या आप यह मानते हैं कि आपका प्रयोग व्यक्ति को अमरत्व की ओर ले जायेगा ?"

"हां, पर एक तरह से।"

"क्या आप यह मानते हैं कि इन चुम्बकीय कणों पर आक्षांस और देशान्तर का असर पड़ता है ?

"हां, जरूर।"

"क्या उम्र के परिवर्तन के साथ-साथ स्वभाव-परिवर्तन भी होता है ?"

"बिना किसी शक के। यह एक मामूली बात है।..."

काफी देर तक प्रश्न पूछे जाते रहे। भारतीय और विदेशी पत्रों के पचास से अधिक प्रतिनिधियों ने डा. टामसन के प्रयोग के सम्बन्ध में अधिक से अधिक जानकारी पाने की कोशिश की। आखिरी बार चाय और नमकीन का एक और दौर चला, फिर संवाददाता डा. टामसन को धन्यवाद देकर बिखरने लगे।

इकबाल मेरा साथ छोड़कर डा. टामसन की ओर चला गया। उनसे कुछ बातें करने लगा। इस बीच मैंने टेलीग्राम का टेक्स्ट तैयार कर लिया।

इकबाल जब डा. टामसन के पास से आया तो फिर हम साथ-साथ सीढ़ियों की ओर बढ़े। नीचे आकर उसने बताया कि डा. टामसन ने अपनी प्रयोगशाला में मिलने के लिए अगले इतवार का समय दिया है, और वे उस दिन अपना प्रयोग भी दिखायेंगे। इकबाल ने मुझे सलाह दी कि मैं अपना मूवी कैमरा मय रीलों के उस दिन के लिए तैयार रखूं।

मुझे और इकबाल को लान के गेट पर पर देखकर पोर्टिको में खड़ा झबरा कुत्ता जोर-जोर से भूंकने लगा। माली जो पौधों को पानी दे रहा था, दौड़कर उसे रोकने गया। हमने उससे बताया कि डा. टामसन से मिलने आये हैं। वह हमें एक कमरे में ले गया और बैठने के लिए कहा। फिर वह कुत्ते के साथ भीतर चला गया।

थोड़ी देर में सफेद पतलून और काली जाकेट पहने हुए एक व्यक्ति कमरे में आया। उसने हमसे हमारा परिचय पूछा, फिर मेरी ओर देखते हुए मुस्कराकर बोला, "तो आप लोग डाक्टर के प्रयोग की फिल्म भी उतारेंगे?"

इकबाल ने हंसकर कहा, "प्रेस का काम बहुत कठिन है। एक बड़ी जिम्मेदारी हमें निभानी पड़ती है—वाइड एण्ड जेन्युइन कवरेज।"

"ओह, यस। दैट'ज ट्रू।"

हमें वह व्यक्ति करीब आधे घण्टे तक बैठने के लिए कहकर चला गया।

टेबिल पर कुछ किताबें और साइंस मैगजीन्स पड़ी थीं। वह कमरा शायद आगन्तुकों के लिए बैठकर इन्तजार करने का था। दो सोफे के अलावा तीन-चार कुर्सियां थीं और दीवार पर लटकता हुआ कैलेण्डर।

हम मैगजीन के पन्ने पलटते हुए इन्तजार करने लगे।

ठीक समय से वही व्यक्ति आया। हमसे उसने बताया कि डाक्टर साहब अपनी प्रयोगशाला में हमें बुला रहे हैं।

हम उस व्यक्ति के पीछे-पीछे चलने लगे। एक लम्बा गलियारा पारकर आंगन में आये, फिर लम्बे बरामदे से होकर गुजरे। भीतर आकर ही मालूम हुआ कि वह कोठी कितनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी है। बरामदे के बाद एक छोटा-सा लान था और लान के बाद डा. टामसन की प्रयोगशाला।

प्रयोगशाला अन्दर से अद्भुत थी। अन्दर कई कक्ष थे। जिन कक्षों से हम होकर गुजरे थे उनकी दीवारों पर सिर्फ मीटर ही मीटर दिखायी पड़े थे। फर्श पर बड़ी-बड़ी मशीनें थीं जिन्हें देखकर यह अन्दाजा लगता था कि इनके चलने पर काफी आवाज होती होगी। पर जिस व्यक्ति के साथ हम चल रहे थे, उसने बताया कि इन मशीनों के चलने पर जरा भी आवाज नहीं होती।

हम डा. टामसन के कक्ष में पहुंचे। उनकी मुद्रा से लगा कि वे हमारा इन्तजार कर रहे थे। वे एक कोने में खड़े थे और उनके हाथ में शीशे का एक उपकरण था। उनके चेहरे पर अजीब सौम्यता फैली थी।

हमारा अभिवादन करके उन्होंने हमें बैठने के लिए कहा, फिर हमारे नजदीक ही एक कुर्सी पर खुद बैठ गये।

डाक्टर ने हमसे चाय पीने ने लिए कहा और हमारे मना करते रहने पर भी उन्होंने इण्टरकाम पर चाय लाने के लिए कह दिया। मैंने उनसे कहा, ''डाक्टर टामसन, हम आपका प्रयोग देखेंगे और उसकी फिल्म लेंगे। मैं चाहता हूं, अपना काम अभी से शुरू कर दें। कृपया आप गम्भीर मुद्रा में बैठिए।

डा. टामसन मुस्कराये। उन्होंने कहा, ''मैं ऐक्टर नहीं हूं। आप नेचुरल तस्वीरें लीजिए।'' इतना कहकर वे खड़े हो गये। अपने हाथ में शीशे का वह उपकरण थामे सामने दीवार की ओर देखने लगे। कमरे में रोशनी काफी थी, और मुझे डाक्टर से अतिरिक्त रोशनी के लिए कहना नहीं पड़ा। इकबाल ने कुछ स्नैप्स लिये और मैंने मूवी कैमरे की रील चला दी। दो-तीन सेकण्ड के बाद मैंने कैमरा रोक दिया। इकबाल ने टेप-रिकार्डर स्टार्ट करके मेज के के नीचे रख दिया। डाक्टर से उसने बैठने का अनुरोध किया। डाक्टर बैठ गये। मैं फिर कोने में चला गया। इकबाल प्रश्न पूछने लगा, ''ह्वाट इज लाइफ ऐज यू नो इट…ह्वाट आर डी एन ए, आर एन ए…''

इकबाल के प्रश्नों का डाक्टर संक्षिप्त उत्तर देते रहे, और मैं चित्र लेता गया।

कुछ देर बाद चाय आयी। हमने सब काम रोककर चाय पीनी शुरू की। इस बात की हमें प्रसन्नता हो रही थी कि हममें डाक्टर काफी रुचि ले रहे थे। उन-जैसा अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त व्यक्ति इतना सौम्य हो सकता है, इसका आभास मुझे उसी दिन हुआ।

चाय के बाद डाक्टर हमें उस कमरे में ले गये, जहां वह अद्भुत प्रयोग हम देखने वाले थे। वह कमरा बड़ा विचित्र था। उसकी दीवारें जैसे लोहे के स्प्रिंग्स की बनी थीं। कमरे के बाहर बहुत से यन्त्र और मीटर लगे थे। डाक्टर ने इकबाल से कहा, ''यह प्रयोग मैं आप पर करूं तो कैसा रहे?''

इकबाल एक क्षण के लिए घबरा-सा गया। यह उसके चेहरे से प्रकट हो रहा था। फिर संयत होता हुआ बोला, ''मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी।''

डाक्टर ने उससे कहा, ''आप उस कुर्सी पर जाकर बैठ जाइए। हम बाहर ही ठहरेंगे।''

इकबाल डाक्टर की बात मानकर कमरे में बढ़ा। उसकी चाल से लग रहा था कि वह कुछ डरा और सहमा हुआ है। डाक्टर ने कहा, ''डोंट बी नर्वस। इट'ज जस्ट ए गेम।''

इकबाल कुरसी पर जाकर बैठ गया। डाक्टर ने कहा, ''मैं इकबाल की उम्र लगभग बीस वर्ष कम कर रहा हूं।''

मेरे कैमरे का लैंस इकबाल की ओर था। डाक्टर ने एक बटन दबाया। इकबाल उसी तरह कुर्सी पर बैठा रहा। कोई अतिरिक्त ध्वनि नहीं हुई, न ही कोई आश्चर्यजनक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा. टामसन के हाथ में शीशे का एक उपकरण था

घटना घटी। इकबाल का चेहरा थोड़ा-थोड़ा सुर्ख जरूर होने लगा था। शायद इस कारण कि वह आशंकित था। डाक्टर तल्लीनता से एक मीटर की रीडिंग ले रहे थे, और एक बक्स-जैसे उपकरण में लगा नाब घुमा रहे थे।

मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब मैंने कुछ ही क्षणों में देखा कि इकबाल तबदील होकर बारह-तेरह वर्ष का एक लड़का बन गया है। डाक्टर ने उससे कुर्सी पर से उठ आने का इशारा किया। वह लपककर हमारी ओर आ गया। डाक्टर ने बताया कि उम्र के बराबर ही यादाश्त भी हो जाती है। मैंने पाया कि इकबाल मुझे पहचान नहीं रहा है। शायद इसका कारण यह था कि जब वह बारह-तेरह वर्ष का रहा होगा, उस समय हम एक-दूसरे से कतई परिचित नहीं थे।

मैं लगातार फिल्म उतारे जा रहा था। मैंने देखा, इकबाल बिलकुल बच्चों-जैसी हरकतें करने लगा था। वह अपनी दोनों बाहें डाक्टर के गले में डालकर झूलने लगा था, और उनसे लाली-पाप की फरमाइश कर रहा था।

डाक्टर ने कठोर स्वर में कहा, "जाओ, कुर्सी पर बैठो। शैतानी नहीं करते।"

इकबाल डरा-सा लपककर कुर्सी पर जा बैठा था।

डाक्टर फिर बक्स-जैसे उस उपकरण का नाब घुमाकर मीटर की रीडिंग ले रहे थे। मैं कैमरे की रील बदलकर फिल्म लिये जा रहा था। यह सब अनोखा दृश्य था, और मुझे तनिक भी विश्वास नहीं हो रहा था कि मैं यह कुछ देख रहा हूं, हालांकि खुद दर्शक था।

देखते ही देखते इकबाल फिर पहले-जैसा हो गया। उसकी मुद्रा से लगा, जैसे वह कुछ देर तक सोया रहा हो, और फिर उठा हो।

डा. टामसन ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "मिस्टर इकबाल, अब आप बाहर आ जाइए। आपका नया जन्म हुआ। मुबारक हो।"

इकबाल बाहर आ गया। मैंने भी कैमरा रोक लिया। इकबाल हम दोनों की ओर आश्चर्य की मुद्रा में देख रहा था। डा. टामसन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने कहा, "मानव पर मैंने यह पहला प्रयोग किया, और यह सफल रहा।"

इकबाल जैसे कुछ याद कर सका, फिर डा. टामसन को बधाई देता हुआ बोला, "अजीब प्रयोग है, डाक्टर। मुबारक हो आपने मेरा क्या कर दिया था? मुझे तो कुछ भी याद नहीं आ रहा है।"

डा. टामसन ने कहा, "अभी आप बारह वर्ष के बच्चे की तरह शरारतें कर रहे थे, मिस्टर इकबाल।"

"सच!"

"यस, मिस्टर इकबाल। अब मैं आपको आपरेट करना बताता हूं। यह प्रयोग अपने ऊपर भी होने देना चाहता हूं। इट'ज टू इजी टु आपरेट दिस मशीन। यह देखिए, मि. इकबाल। इस मीटर की काली सूई शून्य पर है। इस बटन को दबाकर आप नाब तब तक दायीं ओर घुमाते जाइए जब तक अस्सी पर न पहुंच जाय। यह लाल सूई अगर हिलने लगे, तो फिर नाब दूसरी ओर घुमाकर शून्य पर ला दीजिए। यह दूसरा नाब बिलकुल न छुएं, और इस मीटर से आपका कोई मतलब नहीं है।"

फिर डा. टामसन कुर्सी पर जा बैठे। उन्होंने कहा, "यस, मिस्टर इकबाल।"

मैं फिर फिल्म लेने लगा। इकबाल ने आपरेट करना शुरू किया। धीरे-धीरे वह नाब घुमाता गया। डा. टामसन की आंखें बन्द थीं और उनके शरीर में धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहा था। हमने देखा कि एक पचास वर्ष का व्यक्ति धीरे-धीरे पचपन···साठ···सत्तर··· और फिर अस्सी पर आकर रुक गया। हमने उस बूढ़े डा. टामसन को देखा और आश्चर्य किया। हमने देखा कि टामसन बहुत बूढ़े हो गये हैं, और उन्हें कुर्सी पर से उतरने में भी कठिनाई हो रही है। किसी तरह कुर्सी पर से उतरकर वे हम तक आये। हमने पाया कि इस दशा में उनकी स्मृति जाती रही है।

इकबाल ने बूढ़े टामसन से कहा, "डाक्टर टामसन, आप फिर उस कुर्सी पर बैठ जाइए।"

बहुत ही आहिस्ता कदमों से टामसन कुर्सी की ओर बढ़े। उनकी हर हरकत से बुढ़ापा झलक रहा था।

डाक्टर टामसन कुर्सी पर बैठ गये। मैं फिल्म लेता रहा। इकबाल कुर्सी की ओर देखता हुआ नाब घुमाता गया। हमने देखा, डाक्टर टामसन का चेहरा पीला पड़ता गया, और उनके चेहरे पर पीड़ा उभरती गयी। मुझे अजीब लग रहा था।

आखिर नाब रुक गया लेकिन टामसन पहले की स्थिति में वापस नहीं लौटे। इकबाल ने घबराकर मीटर देखा, फिर कांपता हुआ मुझसे बोला, "दोस्त, गलती से नाब उम्र बढ़ाने की ओर घूमता गया। यह मीटर देखो, यहां एक सौ चालीस पर काली सूई पहुंची है और लाल सूई लगातार हिल रही है।"

मैंने इकबाल से कहा, "नाब जल्दी पीछे करो।" मैंने कैमरे को एक तरफ रख दिया।

इकबाल ने नाब पीछे किया लेकिन उम्र की सूई पीछे नहीं खिसकी। सामने कमरे में मैं एक अजब खामोशी देख रहा था—एक निश्चेष्ट आकृति—डा. टामसन। ●

फान्तासी

दो व्यक्ति मंगल ग्रह से पृथ्वी पर आये। वे पृथ्वी की यात्रा करने वाले पहले मंगलवासी थे। अमरीका के एक नगर में वे उतरे। उन्होंने हर मकान पर टेलिविजनके एरियल देखे। उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उनमें से एक खुशी में चिल्लाया, "वह देखो औरतें!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

नयी ईंटें

राजस्थान नहर में, छत्रगढ़ क्षेत्र में पायी जाने वाली मिट्टी में ३५-४० प्रतिशत मृत्तिका (clay) और १५ प्रतिशत पिसा हुआ चूना होता है।

इस मिट्टी द्वारा बनी ईंटों के सूखने पर दरारें पड़ जाती थीं। इसलिए केन्द्रीय भवन अनुसन्धान संस्थान रुड़की में इस समस्या पर अनुसन्धान कार्य किया गया ताकि ईंटों में दरारें न पड़ें और उचित दलन शक्ति की ईंटें उत्पन्न की जा सकें। इन अनुसन्धानों के परिणामस्वरूप यह पता चला है कि ६० प्रतिशत वरीक बालू ईंटों में दरारें पड़ने से रोक सकती है।

इस कोटि की बालू आस-पास के क्षेत्रों में काफी मात्रा में पायी जाती है। १००°सें. पर गरम की गयी ईंटों की दलन शक्ति ६२ कि. ग्रा. प्रति वर्ग सें. मी. और जल-शोषण क्षमता १५-१६ प्रतिशत पायी गयी है।

खान संवातन से सम्बन्धित सर्वेक्षण

उद्योग के सहायतार्थ कुछ समय से केन्द्रीय खान अनुसन्धान संस्थान, धनबाद में खान संवातन के सम्बन्ध में सर्वेक्षण कार्य किया जा रहा है।

अभी तक झरिया, रानीगंज और सिंगारेनी कोयला क्षेत्रों के अन्तर्गत २१० वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में स्थित २८ खानों का सर्वेक्षण किया जा चुका है।

इस सर्वेक्षण के अन्तर्गत परिमाणात्मक सर्वेक्षण, दबाव सर्वेक्षण, तापीय सर्वेक्षण आदि सम्मिलित हैं।

विशेष प्रकार के सिरामिक छन्ने

केन्द्रीय इलेक्ट्रानिक इंजीनियरी अनुसन्धान संस्थान, पिलानी में ट्रांजिस्टर तथा रेडियो में उपयोग के लिए एक विशेष प्रकार के सिरामिक छन्ने (filter) का निर्माण किया गया है। यह एक ट्रांसफारमर की भांति कार्य करता है। ये छन्ने राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला, नयी दिल्ली द्वारा प्राप्त विशेष कोटि के सिरामिक टुकड़ों द्वारा बनाये गये हैं। ये पहले प्रयुक्त छन्नों की अपेक्षा अधिक उपयोगी प्रमाणित हुए हैं।

स्मृति इंजेक्शन : एक अनोखी परिकल्पना

हाल में रूस में हुई मनोवैज्ञानिकों की महासभा में दो मनोवैज्ञानिकों ने एक परिकल्पना सामने रखी, जिसके अनुसार स्मृति जैव रसायन तत्त्वों को एक प्राणी के मस्तिष्क से निकालकर दूसरे प्राणी के मस्तिष्क में स्थानान्तरित किया जा सकता है। इस प्रकार एक प्राणी की स्मृति दूसरे तक स्थानान्तरित की जा सकती है।

इस परिकल्पना की जांच करने के लिए अमरीकी वैज्ञानिक प्रो. मार्क रोजेनविग तथा डा. एलन जैकबसन ने कुछ जन्तुओं के मस्तिष्क से रिबोन्यूक्लिक अम्ल निकालकर इसे नियन्त्रित परन्तु अप्रशिक्षित जन्तुओं के मस्तिष्क में पहुंचा दिया। परिणामस्वरूप ये अप्रशिक्षित जन्तु भी प्रशिक्षित जन्तुओं की भांति व्यवहार करने लगे। उक्त वैज्ञानिकों का कथन है कि निकट भविष्य में एक मनुष्य की स्मृति को दूसरे मनुष्य के मस्तिष्क में स्थानान्तरित करना सम्भव होगा।

यदि ऐसा हुआ तो विद्यार्थियों, वकीलों, डाक्टरों आदि को मोटे-मोटे ग्रन्थ याद करने के लिए इतना परिश्रम नहीं करना पड़ेगा। इसके लिए सम्बन्धित स्मृति इंजेक्शन ही काफी होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतिशील डंड-समूह

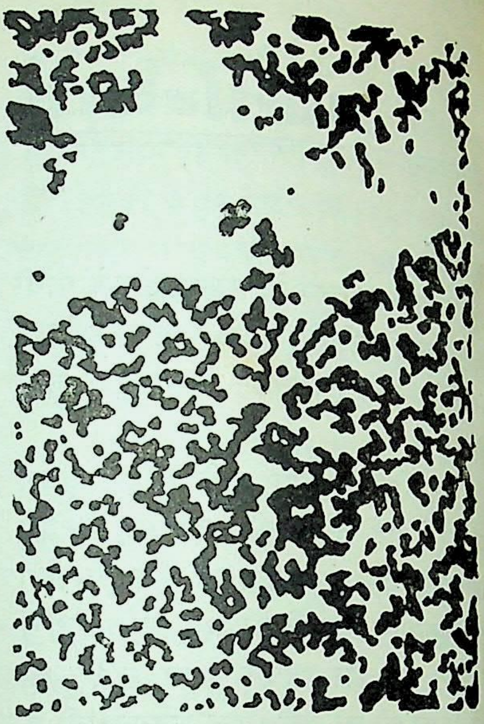

लुई पाश्चर की वैचारिक उपलब्धि

डा. हर्ष प्रियदर्शी

लुई के सूक्ष्मदर्शी के दायरे में एक नया रहस्य उद्घाटित हुआ। उसने असंख्य गतिशील दण्ड देखे। पहले तो उसे अत्यन्त आश्चर्य हुआ, क्योंकि यह सब देखने की आशा उसने नहीं की थी। वह खमीर के कणों को देखने के लिए उत्सुक था, किन्तु बाद में उसने इस नये दृश्य की ओर ध्यान दिया। आकार पर ध्यान लुई ने दिया तो पाया कि यह नयी वस्तु आकार की दृष्टि से खमीर कणों के आकार से कहीं छोटी है। यह नयी वस्तु एक इंच के पचास हजारवें भाग के बराबर थी।

लुई के मन में एक संशय कौंधा

तमाम रात लुई बेचैन रहा। वह सुबह का बेबसी से इन्तजार कर रहा था। सुबह होते ही वह भागा-भागा बीगो महोदय के कारखाने में गया। उसने पुनः मदिरा के पात्रों से बीमार खमीर के कुछ टुकड़े लिये और लौट आया। उसने बीमार खमीर के कणों का अध्ययन प्रारम्भ किया, किन्तु इस बार भी उसे वे ही गतिशील दण्ड-समूह मिले। इन समूहों में लाख-लाख दण्डाकार प्राणी गतिशील थे।

लेकिन इस बार के अध्ययन से लुई को एक नयी वस्तु मिली। उसने गतिशील दण्ड-समूह के सम्बन्ध में एक नयी बात खोज निकाली। उसने अपने प्रयोग में पाया कि इन गतिशील दण्डाकार प्राणियों में अल्कोहल की जगह दही के अम्ल कण हैं। अचानक उसके मन में एक संशय कौंधा—ये गतिशील दण्ड-समूह जीवित कीटाणुओं का समूह हैं, और उस तरह जिस तरह खमीर, लेकिन खमीर की भांति ये अल्कोहल नहीं बनाते, बल्कि दूध को दही में परिवर्तित करते हैं। उसने एक अन्य तथ्य भी खोज निकाला कि ये मदिरा के रोगी पात्रों में कहीं से आ जाते हैं और खमीर से युद्ध करने लगते हैं। इस कीटाणु-युद्ध में ये दण्डाकार अम्लीय कीटाणु विजयी होते हैं। यही कारण है कि इन रोगी मदिरा पात्रों में चुकन्दर से मदिरा नहीं बन पाती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुई की वैचारिक उपलब्धि : एक सम्भावना

अपनी इस अद्भुत वैचारिक उपलब्धि पर लुई सीधा अपनी पत्नी के पास भागा-भागा गया। उसने उसे अपनी महान उपलब्धि का परिचय दिया। लुई की पत्नी अपने भावुक वैज्ञानिक पति की बातें ध्यानपूर्वक सुनती रही, किन्तु वह उसकी उपलब्धि की भावी सम्भावनाओं को ग्रहण न कर सकी, फिर भी लुई के उज्ज्वल भविष्य की कल्पना में वह खो-सी गयी। लुई की पत्नी को स्वयं खमीर तथा दण्डाकार कीटाणुओं के सम्बन्ध में कोई ज्ञान नहीं था, किन्तु उसकी लुई के अनुसन्धानात्मक प्रयोगों में आस्था थी। उसे यह विश्वास था कि एक दिन वह दुनिया का ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिक हो जायगा।

एक भावी सम्भावना

लुई की यह वैचारिक उपलब्धि मात्र एक भावी सम्भावना ही थी जिसे उसने सहसा ही प्राप्त कर लिया था। ऐसी अनेक सम्भावनाएं लुई के जीवन में आयीं जिनमें से वह कुछ को ही सत्य का रूप दे सकने में समर्थ हो सका। किन्तु यह वैचारिक उपलब्धि एक ऐसी सम्भावना थी जो दस हजार वर्ष पुराने किण्वन के रहस्य और गोपनीयता की परतों को तोड़ने में सफल हो जाती। लुई के समक्ष किण्वन की यह गोपनीयता और रहस्यमयता एक प्रश्न बनकर खड़ी हो गयी और वह यह सोचने पर विवश हो गया कि क्या उसकी उपलब्धि ही इस किण्वन समस्या का समाधान है। फिर लुई एकाग्र चित्त से समस्या का समाधान ढूंढ़ने में जुट गया। लेकिन वह अपने आस-पास के माहौल से बेखबर नहीं था। वह किसानों तथा उनकी समस्याओं में पर्याप्त दिलचस्पी दिखा रहा था।

आकार में क्षुद्रतम, दैत्य से अधिक समर्थ

उसने अपनी प्रयोगशाला में एक नया विभाग 'खाद परीक्षण केन्द्र' खोल दिथा था। वह पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी की सदस्यता के लिए भी खड़ा हुआ, लेकिन दुर्भाग्यवश उसे पराजय स्वीकार करनी पड़ी। किन्तु इस पराजय से वह विचलित नहीं हुआ। वह दुगुने जोश के साथ फिर काम में जुट गया। अपने चुनाव में असफल रहने के बाद उसने अपने विद्यार्थियों के लिए एक शैक्षणिक पर्यटन योजना बनायी और उन्हें बैल सियनीस के मदिरा के कारखानों में व्यावहारिक ज्ञान दिलाने की दृष्टि से ले गया। अपने जीवन के इन अस्तव्यस्तदिनों में लुई बार-बार अपनी किण्वन-सम्बन्धी उपलब्धि की सत्यता के बारे में सोचा करता था। इन्हीं दिनों लुई ने एक विधि खोज निकाली जिसके द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता था कि सूक्ष्मतम दण्डाकार वस्तुओं में जीवन है, और आकार में क्षुद्रतम होते हुए भी ये किसी दैत्य से अधिक समर्थ हैं। उसने यह स्थापना दी कि ये चीनी को लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित कर सकते हैं।

लुई चिन्तन में डूब गया। विचारों में उलझा हुआ वह एक विचित्र सम्भावना की ओर बढ़ता रहा। उसने चुकन्दर के गूदे के रस के अतिरिक्त एक दूसरे घोल में उन दण्डाकार प्राणियों को रखने का निश्चय किया। वह यह ज्ञात करना चाहता था कि क्या ये दण्डाकार प्राणी दूसरे किसी घोल में भी प्रजनन कर सकते हैं और जीवित रह सकते हैं?

परिणाम की प्रतीक्षा

पहले लुई ने शुद्ध चीनी के घोल में इन दण्डाकार प्राणियों को रखा, और प्रजनन कराने की चेष्टा की, लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। इस असफलता के बाद उसने अनेक प्रयोग किये और उनमें भी असफल रहा। फिर उसने एक विचित्र घोल का निर्माण किया। इस विचित्र घोल का निर्माण करने के लिए उसने पहले थोड़ा-सा शुष्क किण्वन शुद्ध जल में घोलकर घोल को उबाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके पश्चात् उसने घोल को स्थिर दशा में रख दिया। इससे किण्वन कण शुद्ध रूप में जल से विलग हो गये। विलग हुए शुद्ध किण्वन घोल में लुई ने अम्लता से बचाव के लिए चाक का कार्बोनेट तथा चीनी की निश्चित मात्रा मिला दी। घोल तैयार हो जाने पर एक बारीक सूई की नोंक की सहायता से उसने बीमार मदिरा पात्रों में से रोगी खमीर कणों के मध्य से एक भूरे रंग के कण को अलग किया और इसे सावधानीपूर्वक नये तैयार हुए खाद्य घोल में डाल दिया। फिर अपने इस नये खाद्य घोल की एक बूंद एक शीशे के पात्र में ली, और उसे तापसंचालित भट्ठी में रख दिया। वह परिणाम की प्रतीक्षा करने लगा।

लेकिन वह एक अजीब सुबह थी जो उसके लिए निराशा ले आयी। वह सुबह ही प्रयोग शाला में गया। वहां पहुंचकर उसने अपने कांपते हाथों से प्रयोग-पात्र उठाया, लेकिन उसमें कोई परिवर्तन नहीं मिला। उसने वह पात्र पुन: भट्ठी में रख दिया, और वहीं फर्श पर निराशा में डूबा लेट गया। समय खिसकता रहा। रात गहराती गयी। वह अंधेरे में उठा। उसने पेट्रोमेक्स मंगाया और उसकी तेज रोशनी में उसने पुन: प्रयोग-पात्र को देखा। उसने महसूस किया कि प्रयोग-पात्र में परिवर्तन हो रहा है। उसने देखा, छोटे-छोटे बबूलों की कतारें घोल की सतह पर उभर रही हैं।

सहसा लुई शान्त हो गया। उसने प्रयोग-पात्र को पुनः भट्ठी में रख दिया।

और एक बार फिर लुई ने भट्ठी में से प्रयोग-पात्र को बाहर निकाला। पेट्रोमेक्स की तेज रोशनी के सामने वह उसे ले आया। उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही, जब उसने देखा कि उस प्रयोग-पात्र में बादल-सा कुछ उठ रहा है ''बड़े-बड़े बबूलों का समूह! उसने पात्र से घोल की एक बूंद सूई की नोंक पर उठाकर सूक्ष्मदर्शी के दायरे में रख दी। उसने सूक्ष्मदर्शी में देखा और आश्चर्य से चीख पड़ा!

(क्रमशः)

ग्राहकों से निवेदन

विज्ञान-लोक की एक प्रति का मूल्य ७५ पैसे है। एक वर्ष का शुल्क ९ रुपये, दो वर्ष का १६ रुपये तथा तीन वर्ष का २० रुपये (विशेष रियायत) है।

पत्र-व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिखें। विज्ञान-लोक जिस लिफाफे में आपके पास आता है, उसी पर आपकी ग्राहक संख्या आपके पते के ऊपर लिखी रहती है।

पता बदलने की सूचना हमें एक मास पूर्व प्राप्त होनी चाहिये। इसके लिए नया और पुराना, दोनों पते भेजें। यदि छह मास से कम के लिए पता बदलवाना हो, तो कृपया अपने डाकखाने से इसकी व्यवस्था कर लें।

नये ग्राहकों को मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा किस अंक से विज्ञान-लोक भेजा जाय, यह अवश्य लिखना चाहिये।

पुराने ग्राहक अपनी सदस्यता का नवीयन (renewal) कराते समय मनी-आर्डर कूपन पर अपना नाम, पूरा पता तथा ग्राहक संख्या लिखने की कृपा करें।

विक्रय-व्यवस्थापक * विज्ञान-लोक * हास्पिटल रोड, आगरा-३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

इस माह प्राप्त तुम्हारे अधिकांश पत्रों में **विज्ञान-लोक** की प्रशंसा से सम्बन्धित पंक्तियां हैं। इस बात की हमें प्रसन्नता है कि **विज्ञान-लोक** तुम्हारे लिए और अधिक रुचिकर तथा उपयोगी होता जा रहा है। पर इसका खेद है कि तुम **करो और देखो** तथा **तुम्हारी कलम से** स्तम्भों में विशेष रुचि नहीं दिखा रहे हो। यदि तुम इन स्तम्भों की सामग्री के स्वरूप में परिवर्तन चाहते हो, तो लिखो। कुछ सदस्यों ने एक-दो और स्तम्भ देने का अनुरोध किया है। तुम सुझाव भेजो कि किस तरह के स्तम्भ चाहते हो।

विज्ञान-लोक के पिछले अंक के सम्बन्ध में प्राप्त तुम्हारे कुछ पत्र—

सरोज यादव (रानीखेत) : **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) में जलीय जन्तुओं के उद्‌भव और विकास का पूरा परिचय मिलता है। अन्य लेखों में **उर्वरक** (सत्यकुमार) तथा **केसर की खेती** (रतनकुमार रायज़ादा) सूचनाप्रधान हैं। **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) निश्चय ही अनोखी कहानी है।

बी. सेन (कलकत्ता) : इधर कुछ महीनों से हर अंक में एक वैज्ञानिक कहानी मिल रही है। आपका प्रयास सराहनीय है। हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य बहुत कम है। विज्ञान-लोक से आशा बंधती है। जुलाई अंक में **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) अत्यधिक रोचक है।

प्रीतम (जलंधर) : जुलाई अंक में सभी लेख रोचक तथा ज्ञानवर्द्धक हैं। **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) विशेष रूप से पसन्द आया। **आयनमण्डल** (कुलदीप चड्ढा) रोचक तथा सूचनाप्रधान है।

निर्मल वर्मा (इन्दौर) : जुलाई अंक में **आयनमण्डल** (कुलदीप चड्ढा) विशेष सूचनाप्रधान लगा। **उर्वरक** (सत्यकुमार) का सामयिक महत्त्व है। पिछले कुछ महीनों से कृषि-विज्ञान पर नियमित रूप से **विज्ञान-लोक** में लेख मिल रहे हैं। आपके प्रयास की सराहना करता हूं। इस अंक की वैज्ञानिक कहानी **एक अजनबी ग्रह की यात्रा** (निरंजन पाल) उच्चकोटि की तथा रोचक है।

जीवनप्रसाद (भाटापारा) : **विज्ञान-लोक** विद्यार्थियों तथा शिक्षकों में समान रूप से लोकप्रिय हो चुका है। जुलाई अंक में **लुई पाश्चर** (डा. हर्ष प्रियदर्शी) अत्यन्त रोचक लगा। **समुद्र-तल के नीचे जीवन** (कुमारी प्रमिला) सूचनाप्रधान है।

…और मुझे फिर भी तुम्हारे सुझावों की प्रतीक्षा है—स्तम्भों के सम्बन्ध में। आशा है लिखोगे।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ७७ के विजेता

प्रथम पुरस्कार

सन्तोषकुमारी (१८८४५) नयी दिल्ली।

द्वितीय पुरस्कार

रघुवीरसिंह (१८८६९) पटना।

तृतीय पुरस्कार

मनोहरलाल (१८८९८) वाराणसी।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ७९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

अनिलकुमार
(स. सं. १८२९२)

कमलेशकुमार
(स. सं. १८३८४)

१२४४६ भरतलाल (१८) पिपरिया, ४७ हरिश्चन्द्र (१६) अलीगढ़, ४८ सुभाषचन्द्र (१९) बरेली, ४९ कैलाशचन्द्र (१६) भोपाल, ५० चन्द्रमोहिनी (१५) कटनी, ५१ दिनेशकुमार (१८) हरदा, ५२ सन्तोषकुमार (१५) हरदा, ५३ विनोदप्रकाश (१६) शाहजहांपुर, ५४ विजयकुमार (१७) सिगरी, ५५ विवेकानन्द (१६) मेरठ, ५६ वीरेन्द्रकुमार (२२) कानपुर, ५७ उमाप्रसाद (१९) मालीनगर, ५८ आदर्शकुमार (१७) मण्डलेश्वर, ५९ राजेन्द्रकुमार (१७) कानपुर, ६० रामेश्वरदयाल (१९) गंजडुण्डवारा, ६१ नरेशकुमार (१४) बीकानेर, ६२ वरुणकुमार (१५) नेतरहाट, ६३ विजयकुमार (१६) नेतरहाट, ६४ उदयकान्त (१५) नेतरहाट, ६५ रविशंकरप्रसाद (१८) गया, ६६ साहबदास (९) आगरा, ६७ अशोक (१६) झांसी, ६८ राजेन्द्रस्वरूप (१७) सुकेत, ६९ आनन्दकुमार (१५) लवन, ७० महेन्द्रसिंह (१५) अल्मोड़ा, ७१ सुरेन्द्रकुमार (१६) अल्मोड़ा, ७२ अशोककुमार (१७) बुढ़ार, ७३ रघुवीरप्रसाद (१७) जबलपुर, ७४ अश्विनीकुमार (१५) कांडला, ७५ श्यामसुन्दर (१६) जयपुर, ७६ चांदमल (१७) व्यावर, ७७ राज्यवर्धन (१६) धामपुर, ७८ अमरनाथ (१८) पूसा, ७९ रजनीकान्त (१४) सहरसा, ८० रंजन (१३) गोविन्दगढ़, ८१ हरिप्रसाद (२०) बिसावर, ८२ ए. के. जुली (१९) भोपाल, ८३ अष्टूजसाह (१८) रतलाम, ८४ चित्राकुमारी (१५) मेरठ, ८५ अनिलकुमार (१४) मेरठ, ८६ विजयकुमार (१४) सीतापुर, ८७ अशोककुमार (१४) खुरजा, ८८ रामसिंह (२१) चन्द्रापुर, ८९ कमलेश्वर (१६) बेतिया, ९० गोपालकृष्ण (१६) इन्दौर, ९१ श्यामलकान्ति (१६) धनबाद, ९२ रणजीतसिंह (१६) दिल्ली, ९३ द्विजेन्द्रसिंह (१८) रामकोला, ९४ किशोरीलाल (१८) पटरंगा, ९५ महताबसिंह (१७) जून्नरदेव, ९६ कृष्णदेवप्रसाद (१९) समेयागढ़, ९७ राजीव (१६) जौनपुर, ९८ रामदयाल (१५) बरेली, ९९ विजयशंकर (१५) मझगांवां, १२,५०० मथुराप्रसाद (२०) बरेली, १ कु. मधुरिमा (१८) शहडोल २ राजेशकुमार (१६) शहडोल, ३ वरुणकुमार (१६) सीतापुर, ४ जनार्दनप्रसाद (१७) इलाहाबाद, ५ हरीशंकर (१९) सिनावल कन्नां; ६ कु. मधुजय वाचस्पति (१८) वाराणसी, ७ महेन्द्रकुमार (१८) अजमेर, ८ राजकिशोर (१८) किशनगढ़, ९ नरेन्द्रकुमार (१३) हिसार, १० सुरेशकुमार (१९) दुर्ग, ११ अशोककुमार (१८) जबलपुर, १२ विनोदकुमार (१५) रायबरेली, १३ टी. एस. शंकर (२२) गोरखपुर, १४ सुरेशप्रसाद (१९) बलिया, १५ अजयकुमार (१७) लखनऊ, (१६) जगन्नाथ राम (१९) बलिया, १७ ओमप्रकाश (१९) जोधपुर, १८ सुरेन्द्रकुमार (१८) इलाहाबाद १९ रमेशचन्द्र (२२) भोपाल, २० दर्शनकुमार (१६) गुड़गांव, २१ प्रकाशवीर (१६) मुरादाबाद, २२ कौशलेन्द्र (१७) सीतापुर, २३ चक्रपाणिसिंह (१७) नेतरहाट, २४ दालचन्द (१७) जबलपुर, २५ दुर्गाप्रसाद (१९) जबलपुर, २६ चन्दू भाई (१८) जामला, २७ दीपककुमार (११) मुरादाबाद, २८ प्रभुनाथ (२०) कलकत्ता, २९ फिलिप (३६) रांची, ३० राजाराम टीकमगढ़, ३१ ईशकुमार (१८) कानपुर, ३२ सुरेन्द्रकुमार (१९) जलन्धर, ३३ अरुणकुमार (१८) देहरादून, ३४ बृजकिशोर (१७) लखनऊ।

भंवरलाल
(स. सं. १८३०७)

हरीशचन्द्र
(स. सं. १८३[illegible])

कौमत
(स. सं. १८३४४)

रामकुमार
(स. सं. १८३[illegible])

इन्द्रनाथ
(स. सं. १८३८३)

रामबालक
(स.सं. १८३[illegible])

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डैडी आप कह रहे थे बैंक में धन बढ़ता है। यह कैसे होता है ?

मेरी ही तरह अनेक व्यक्ति बैंक में अपना रुपया जमा रखते हैं। बैंक में बहुत सा रुपया इकट्ठा हो जाता है। उस रुपये को बैंक दुकानदारों, कारखानों और सरकार को उधार दे देती है। कुछ समय बाद बैंक को अपना रुपया ब्याज सहित वापस मिल जाता है क्योंकि बैंक हमारे रुपये का उपयोग करती है, इसलिए उसमें से कुछ ब्याज हमें भी दे देती है। इससे हमारा रुपया बढ़ता है। यदि हम रुपये को बैंक में जमा न करेंगे, तो वह कैसे बढ़ेगा ?

ठीक है! आप अपना रुपया तो पंजाब नेशनल बैंक में ही जमा रखते हैं ना ?

हाँ, बेटा। वही मेरा बैंक है। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PR/PNB/6623 H-1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ३० नवम्बर

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५३ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ३० नवम्बर तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायेगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७९ के प्रश्न

१. भारत में सूक्ष्मदर्शी के लिए नेत्रक (eye-piece) का निर्माण कहां हुआ है ?

२. किस देश में हाल ही में एक ऐसी कार का निर्माण हुआ है जो जमीन पर तो चलती ही है, हवा में भी उड़ती है ?

३. पेप्टिक अल्सर प्रायः कैसे हो जाता है ?

४. मई-जून, ६६ में अन्तर्राष्ट्रीय कम्प्यूटर प्रदर्शनी कहां हुई थी ?

५. प्राथमिक अन्तरिक्ष विकिरण के कण पृथ्वी की ओर तेजी से आते हैं या मन्द गति से ?

६. क्या एक्स-किरणें हड्डियों को भी भेदकर निकल जाती है ?

७. ९ अगस्त १९६६ को स्टीफेन किल्सटन ने जिस पुच्छल तारे को देखा था, उसका क्या नाम रखा गया है ?

८. किस देश के वैज्ञानिकों ने ऐसा लेसर विकसित कर लिया है जिससे अनेक तरंग लम्बाइयों की किरणें प्राप्त की जा सकती हैं ?

९. अल्यूमीनियम की मिश्रधातु से सर्वप्रथम कब और कहां वायुयान बनाया गया था ?

१०. क्या जैट विमान सभी हवाई अड्डों पर उतर सकते हैं ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ७७ के प्रश्नों के उत्तर

१. कंक (Kunk)।

२. लगभग ७५ वर्ष तक।

३. कम से कम २६८० टन।

४. एस्परेगस (Asperagus)।

५. दक्षिणी ध्रुव में।

६. एटलस (Atlas)।

७. १९४६ में।

८. हां।

९. सर जेम्स यंग सिम्पसन।

१०. फूल है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिलिकन

रेत में, चमक में, हीरे में

प्रतापभानु (स. सं. ५१६३)

यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि कारबन संसार में यौगिक अवस्था में कई पदार्थों में पाया जाता है। वैज्ञानिकों का मत है कि कारबन के बाद यदि कोई और पदार्थ जीव सृष्टि या निर्जीव सृष्टि का मुख्य अंग बन सकता है, तो वह सिलिकन है। जब इस प्रश्न पर बहस होती है कि सूर्य के दूसरे ग्रहों पर जीवन होगा या नहीं, तो यही सम्भावना सामने आती है कि वहां सिलकिन पर आधारित सृष्टि होगी। कारबन और सिलिकन मिलतेजुलते हैं।

खुदाई में जीवधारियों की लाशें ज्यों की त्यों निकलने की बात सबने पढ़ी होगी। लाशें? किस कारण इस प्रकार सुरक्षित रखी रहती हैं।

यह सब चमत्कार सिलिकन का ही है।

सृष्टि पृथ्वी के गर्भ में

प्राचीन काल में भूकम्पों के कारण जीव-सृष्टि और वनस्पति सृष्टि पृथ्वी के गर्भ में पहुंच गयी। दबाव के कारण उनमें रूपान्तर होने लगा। कई गैसें उनमें से उड़ गयीं और कारबन बचा। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया तथा परिस्थितियां बदलती गयीं, वह कारबन सिलीकन का रूप धारण करता गया। सिलिकन का मुख्य गुण उसकी कठोरता है। इससे वे लाशें और वनस्पतियां ज्यों की त्यों सुरक्षित रह गयीं। उनमें सड़ांध पैदा न हुई।

इससे पता चलता है कि पृथ्वी के अन्दर सिलिकन का भण्डार भरा है। लेकिन यह पदार्थ स्वतन्त्र रूप से शायद ही कहीं दिखायी पड़ता है। अक्सर यह सिलिका के रूप में मिलता है, जिसका रासायनिक नाम सिलिकन डाइआक्साइड (SiO_2) है।

सिलकिन का विशुद्ध रूप स्फटिक

हम डाइआक्साइड से कारबन डाइ-आक्साइड (CO_2) जोड़ लेते हैं।

कार्बन डाइआक्साइड एक अदृश्य गैस है, लेकिन केवल डाइआक्साइड की समानता के कारण जरूरी नहीं है कि सिलीकन डाइआक्साइड भी अदृश्य गैस होगी। यह कठोर पदार्थ है। डाइआक्साइड का केवल एक मतलब है कि कार्बन की तरह सिलिकन का भी एक अणु आक्सीजन के दो अणुओं से संयोजन करता है।

स्फटिक सिलिकन और कांच

सिलिकन का विशुद्ध रूप स्फटिक (क्वार्ट्ज) होता है। समुद्र की रेत सबसे ज्यादा सिलिकन की बनी है। रेत से कांच तैयार किया जाता है। स्फटिक सिलिकन का कांच तो बहुत ही मजबूत होता है। यह जानकर भी कोई आश्चर्य में पड़े बिना नहीं रह सकता कि जब हम इस कांच को खूब गरम करें, इतना गरम करें कि वह लाल हो जाय, फिर पानी में डुबायें तो छन-छन करके ठण्डा हो जायगा परन्तु टूटेगा नहीं। साधारण रेत का कांच इतना गरम करके ठण्डा करने पर चूर-चूर हो जाता है।

साधारण कांच ६००–९००° सें. ताप पर ही मुलायम हो जाता है, परन्तु यह कांच १५००° सें. पर भी अपनी कठोरता नहीं छोड़ता।

संसार में जितने भी बहुमूल्य पदार्थ हैं, उन सबमें हीरा प्रमुख है—मूल्य में, सुन्दरता में, कठोरता में। हीरों में भी सिलिकन डाइ-आक्साइड रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज ही
ब्रुअरी की तरोताज़ा
बीयर से आनन्द उठाइये

इसका स्वाद अत्यन्त रुचिकर है। बीयर अच्छी चीजों के स्वाद को और भी अधिक अच्छा बना देती है। यह स्वाद में परिपूर्ण आज का स्वल्पाहार है।

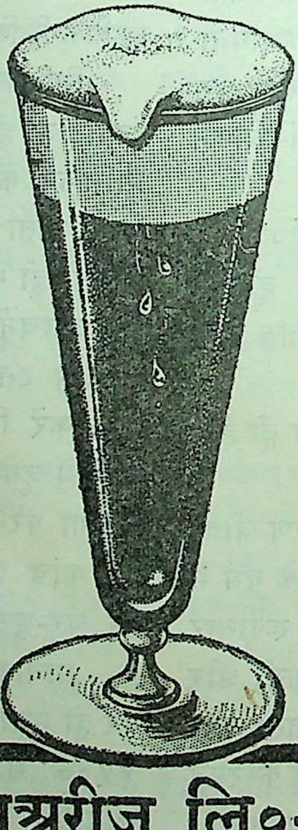

गोल्डन ईगल
लागर बीयर

डायर मीकिन ब्रुअरीज लि०-स्थापित १८५५
सोलन ब्रुअरी – लखनऊ डिस्टिलरी – कसौली डिस्टिलरी
मोहन नगर ब्रुअरी ऐंड एलाइड इन्डस्ट्री (यू० पी०)
शताब्दी पुराना अनुभव विश्वास की गारन्टी है
DMB-NP-703

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक प्रकाशन

(हाई स्कूल एवं हायर सेकेण्डरी स्कूल के विद्यार्थियों के लिए)

प्रारम्भिक भौतिकी (मूल्य : ३·५०)

लेखक

दयाप्रसाद खण्डेलवाल

एम. एस-सी., पी-एच. डी

देवीसिंह विष्ठ राजकीय महाविद्यालय, नैनीताल

जन्तु-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : ३·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

बी. एस-सी. (आनर्स), एम. एस-सी., एल.टी., एफ.एन.ए.

ला मार्टीनियर कालेज, लखनऊ

सामान्य-विज्ञान (मूल्य : ६·२५)

लेखक

रामचरण मेहरोत्रा, एम. एस-सी., पी-एच. डी.
दयाप्रसाद खण्डेलवाल, एम. एस-सी., पी-एच. डी.
आर. डी. विद्यार्थी, एम. एस-सी.

प्रैक्टिकल जन्तु-विज्ञान (मूल्य : २·००)

प्रैक्टिकल वनस्पति-विज्ञान (मूल्य : २·००)

लेखक

आर. डी. विद्यार्थी

प्रकाशक

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise August 1969 Regd. No. L 1410

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

...रोड, आगरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar